जैनहितैषी।

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात्सर्वज्ञनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

११ वाँ भाग | श्रावण, भाद्र, वीर नि० सं० २४४१। | अंक १०-११

पर्युषणपर्व
अथवा
पवित्र जीवनका परिचय।

जो धर्म जीवनको उच्च बनाता है वही धर्म मुझे मान्य है। धर्मके जो कार्य, जो क्रियायें और जो भावनायें जीवनको ऊँचा बनानेके आशयसे वञ्चित हैं वे चाहे जैसे प्रतिष्ठित पुरुषकी बतलाई हुई क्यों न हों—स्वयं ब्रह्मा भी उनके उपदेष्टा क्यों न हो, उन्हें माननेके लिए मैं तयार नहीं।

धर्मकी जो आज्ञायें आरोग्यरक्षामें सहायक हों, जो धार्मिक क्रियायें मनुष्यको संसारके प्रति उसके जो कर्तव्य हैं उनके पालनेमें यथेष्ट बल-प्रदान करती हों, और जो धार्मिक भावनायें आधि-व्याधि-उपाधिके समुद्रमें पड़े हुए मनुष्यको तैरनेकी कला सिखलाती हों, वे आज्ञायें, क्रियायें और भावनायें मुझे मान्य हैं और प्रत्येक विचारशील मनुष्यको मान्य होनी चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुपयोगी क्रियाओं, आज्ञाओं और भावनाओंमें अपनी शक्ति और समयका व्यय करना मुझसे—-बीसवीं शताब्दिके गंभीर जीवन-कलहके बीच रहनेवाले तुच्छ मनुष्यसे—नहीं बन सकता। उपयोगिता (utility) ही इस जमानेका दृष्टिबिन्दु है। इस लिए, जिस पर्युषणपर्वको जैनसमाज हज़ारों वर्षोंसे पालता आ रहा है और पालता है, वह पालने योग्य है या नहीं, इस प्रश्नपर मैं उपयोगिता अथवा यूटिलिटीकी दृष्टिसे विचार करना चाहता हूँ। मैं इस सिद्धान्तको नहीं मानता कि इसे लाखों मनुष्य पाल रहे हैं, इस लिए मुझे भी पालना चाहिए, या यह प्राचीन समयसे चला आ रहा है और अपने बड़े बड़े पूर्वजोंने इसका पालन किया है, इस लिए पालनीय है।

इसी तरह केवल इस कारण भी मैं इसका अंगीकार नहीं कर सकता हूँ कि इसके पालनेके लिए अमुक अमुक महापुरुषोंकी आज्ञा है। क्योंकि क्रिश्चियन, मुसलमान आदि सारे धर्मोंके अनुयायी भी तो अपनी प्रत्येक क्रियाको इसी तरह परमेश्वरकी आज्ञा और ईश्वरनिर्मित ग्रन्थसे विहित बतलाते हैं, परन्तु जैनधर्मानुयायी अपनी बुद्धिसे प्रश्न करके उनकी क्रियाओंको स्वीकार करनेसे इंकार कर देते हैं।

पर्युषण पर्वको स्वीकार करनेके पहले उसका अर्थ या स्वरूप समझ लेना चाहिए, और उसकी उपयोगिता भी जान लेनी चाहिए। मैंने इस विषयमें अपनी शक्तिके अनुसार जो कुछ अध्ययन और मनन किया है, उससे मुझे निश्चय हो गया है इस पर्वका पालन अवश्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करना चाहिए; बल्कि यदि बन सके तो इसे जो दश दिनके भीतर मर्यादित कर दिया है सो बढ़ाकर अपने जीवनकी अवधिके बराबर विस्तृत कर देना चाहिए।

पर्युषण अथवा पर्युपासना, अर्थात् अपने भीतर त्रिगढ़रूप गढ़की ओटमें विराजेहुए आत्मदेवकी उपासना, आत्मावरमण, आत्मास्थिरता, आत्मैकता, मन वचन कायके योगोंका आत्माभिमुखीकरण और विशेष स्पष्ट शब्दोंमें कहना हो तो आत्मिक जीवन, दैवीजीवन अथवा पवित्र जीवन।

यद्यपि आत्माके लिए आत्मिकजीवनमें जीना सहज अथवा स्वाभाविक ही है और इस कारण यह बहुत ही सुगम काम है; तथापि आत्माने अपनी ही इच्छासे जो जो शरीर बाँधे हैं वे सब अपने स्वभावके अनुरूप रात दिन प्रवर्तित होते रहते हैं, इस कारण उनके भीतर निवास करनेवाले आत्माको, उनके गाढ़ सहवासके कारण उनका स्वभाव ही निज स्वभाव जान पड़ता है और इससे स्वस्वभावका स्मरण नहीं रहता है। स्थूल शरीर, तैजस या इच्छाशरीर, और कार्माण या विचारशरीर, इन तीनों शरीरोंके साथ सतत सहवास रखनेवाला आत्मा इनके धर्मोंको अपना धर्म मानने लगता है और वह यहाँ तक कि स्वस्वभावको तो बिलकुल ही भूल जाता है। जिस तरह गणिकाके सहवासमें रहनेवाले पुरुषको शायद ही कभी अपनी पत्नीका स्मरण होता है, उसी तरह आत्माको भी इन तीन शरीरोंके निरन्तर सहवासके कारण स्वस्वभावका स्मरण शायद ही कभी होता है और वह भी प्रयत्न करनेसे होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस परसे तीन सिद्धान्त फलित होते हैं—१ स्वभाव अथवा स्वस्वभावमें रमण करना मनुष्यके लिए स्वाभाविक है, अशक्य नहीं। २ परन्तु मनुष्य प्रायः विभावमें अथवा जड़भावमें ही मग्न रहता है—परप्रदेशमें ही और स्वभावविरुद्ध वातावरणमें ही सारा जीवन अथवा जीवनका अधिक भाग व्यतीत करता है। ३ और स्वभावविरुद्ध वातावरणमें रहनेके कारण उसे स्वभावतः ही दुःखानुभव करना पड़ता है,—जिस तरह कि हवामें स्वेच्छाविहार करनेवाले किसी पक्षीको यदि मछलियोंके साथ सरोवरमें रहना पड़े तो उसे दुःख ही होगा। यद्यपि यहाँ जिस प्रकार मछली या पानी स्वयं 'दुःख' नहीं है—वास्तवमें दुःख कोई पदार्थ ही नहीं है—स्वभावविरुद्ध वर्ताव करनेसे जिन परिणामोंका अनुभव होता है उन्हें ही दुःख कहते हैं—उसी प्रकार शरीरों अथवा सृष्टिके पदार्थोंके किसी भागविशेषमें कोई 'दुःख' नामकी चीज़ भरकर नहीं रख दी गई है कि जिससे उसका संग करनेवालेको दुःख चिपक जाता हो; तथापि जब अमर्यादित स्वभाववाला आत्मा इन मर्यादित स्वभाववाले शरीरों या पदार्थोंमें निवास करने लगता है तब उस स्वभावविरुद्ध कार्यसे स्वभावतः ही कुछ अप्रिय अनुभव होता है और उसे ही हमने 'दुःख' संज्ञा दे रक्खी है। वास्तवमें दुःख सुख ये सब कल्पनायें हैं, विना अस्तित्वके कोरे नाम मात्र हैं। अतएव दुःखके दूर करनेका केवल एक ही मार्ग हो सकता है कि विभावसे मुक्त होने और स्वभावमें रक्त होनेके लिए जितना बन सके उतना उद्योग करना।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अमुक स्थलमें बैठेंगे तभी विभाव-विरक्तता होगी, अमुक जातिके वस्त्र पहरेंगे तभी स्वभावका स्मरण होगा, अमुक मंत्र या पाठका जाप करेंगे, तभी स्वभावकी रमणता होगी, अमुक प्रकारकी क्रिया करेंगे तभी आत्मलीनता होगी— इस तरहका न कोई नियम है और न हो सकता है। क्योंकि स्थल, वस्त्र, पाठ, क्रिया ये सब स्वयं भी विभाव हैं–जड़ हैं। जो पन्थ या सम्प्रदाय सबसे श्रेष्ठ होनेका दावा करता हो उसीकी आज्ञाके अनुसार वस्त्र पहने जावें, उसीकी बतलाई हुई उग्र तपश्चर्या की जावे और उसीके पवित्र शास्त्र जिह्वाग्र कर लिये जावें, तो भी ऐसा हो सकता है कि विभाव वृत्ति न मिटे और स्वभावलीनता न हो। क्योंकि साधनोंमें स्वयं कोई शक्ति नहीं है–वे आत्माभिमुखीकरणके निमित्त मात्र हैं। यह सच है कि साधन किसी न किसी अच्छे आशयसे बतलाये जाते हैं; परन्तु वे जड़ शरीरके लिए नहीं किन्तु आत्माके लिए हैं और उनका उपयोग आत्माभिमुख वृत्तिसे जितने परिमाणमें किया जायगा उतने ही परिमाणमें उनसे आत्मस्मरण और आत्मस्थैर्यका होना संभव है।

ऊपर जो तीन सादे सिद्धान्त बतलाये गये हैं वे सादे होने पर भी बहुत गहन हैं, बारबार विचार करने योग्य हैं और हृदयपट पर लिख रखने योग्य हैं। स्वभावमें रमण करना मनुष्यके लिए यद्यपि चिरकालीन विभावपरिचयके कारण कठिन है, परन्तु अशक्य नहीं है–बल्कि स्वभावरमणता, धार्मिक जीवन, पवित्र जीवन या दैवी जीवनको हमने जितना समझ रक्खा है उतना कठिन भी नहीं है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक काम अभ्यास आदत या टेवके बिना अतिशय कठिन जान पड़ता है, परन्तु वह काम कठिन नहीं होता उसका अभ्यास डालना या उसे अपनी आदत बना लेना ही कठिन होता है। आदत या टेव पड़ी कि वह काम सुगम और स्वाभाविक हो जाता है। पानीमें डुबकी लगाना बहुत ही कठिन काम है, परन्तु आदत पड़ जानेसे वही एक मामूली बात हो जाती है और इस कारण लाखों आदमी डुबकी लगानेमें ही आनन्दानुभव करते हैं। इसी तरह आत्माकी उपासना, आत्मरमणता या धार्मिक जीवनका भी सारा दारोमदार टेव या आदत पर है। शराब पीनेवाले कहते हैं कि क्लेरेड नामकी शराबका प्याला जब सबसे पहले वे अपने मुँहके पास ले गये, तब ऐसा मालूम हुआ कि कै हुई जातीं है, परन्तु पीछे अभ्यास पड़ जानेपर उन्हें इस शराबके आगे और सब शराबोंका मज़ा तुच्छ मालूम होने लगा! योगी जनोंको शहरके कोलाहल और ठाटवाटके पास जाना भी पसन्द नहीं आता, पर जिस एकान्तवाससे हम लोग घबड़ाते हैं उसमें उन्हें निःसीम आनन्द आता है। एक शहरके एक मीनारमें बहुत बड़ी घड़ी लगी हुई थी। एक पागल मनुष्य उसीके समीप रहता था। इस लिए ज्योंही घंटा बजता था त्योंही वह एक—दो—तीन—गिनने लगता था—यह बात उसकी आदतमें शामिल हो गई थी। एक बार घड़ी बिगड़ गई और घंटा बजना बन्द हो गया; तो भी कहते हैं कि वह पागल अपनी आदतके अनुसार ठीक घंटे पर एक—दो—तीन आदि गिनने लग जाता था! एक निर्दोष मनुष्य बास्टाइलके किलेमें कैद कर दिया गया था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लम्बी सजाकी अवधि बीत जानेपर जब वह जेलखानेकी अँधेरी कोठरीमेंसे बाहर निकाला गया, तब उसने यह प्रार्थना की थी कि मुझे उसी अँधेरी कोठरीमें अपना शेष जीवन व्यतीत करनेकी आज्ञा दी जाय! वर्षोंके अभ्यासके कारण, आदत पड़ जानेके कारण वह स्थान ही उसे सुखरूप भासने लगा था और उसे छोड़कर प्रकाशमें आनेसे उसे दुःख होता था। बीड़ी सिगरेट चुरुट पीना और तमाखू खाना पहले तो बुरा मालूम होता है—इनके पीने खानेसे एक तरहकी अरुचि होती है; परन्तु कुछ समयमें आदत पड़ जानेसे ये बलायें भी मजेदार जान पड़ने लगती हैं। डा० एटरबरी नामका विद्वान् कहता है कि "पहले मुझे दफ्तरके और हिसाबकी जाँच करनेके काममें ज़रा भी अच्छा न मालूम होता था—मेरी तबीयत ऊब जाती थी, परन्तु अब लगातार इसी काममें लगे रहनेसे मुझे इसमें बड़ा आनन्द आता है।" इन सब दृष्टान्तोंसे लार्ड बेकनके ये वाक्य सर्वथा सत्य मालूम होते हैं कि "जो चीज़ हमें पहले बुरी और कठिन मालूम होती है वही चीज़, जब हमारे अभ्यासमें आ जाती है— आदतमें दाखिल हो जाती है, तब इतनी आनन्ददायक स्वाभाविक और सुगम हो जाती है कि उतनी और कोई चीज़ नहीं होती!" मनुष्यस्वभावकी रचनाका यह रहस्य—यह छुपी हुई कल जान लेनेसे मनुष्यको एक प्रकारका आश्वासन मिलता है। वह इस विश्वासको दूर कर सकता है कि धर्ममय या पवित्रजीवन बहुत कठिन है और आदत डालनेका प्रयत्न करने लगता है। जगत्के अकारणबन्धु तीर्थकरोंने भी इस आदतके डालनेके लिए ही पर्युषणपर्वकी योज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ना की है। पर्युषणपर्वको पर्युपासनाका परिचय करानेवाला, आत्मिक जीवनकी टेव डालनेवाला, एक पाठ–एक अभ्यास पाठ (Exercise) समझना चाहिए।

मेरी समझमें, विभावके वातावरणमें ३६५ दिन फिरनेवाले या अस्वाभाविक जीवन व्यतीत करनेवाले मनुष्यको केवल दश दिनोंमें स्वाभाविक जीवनका परिचय करानेके लिए—आन्तर्जीवनका अभ्यास अथवा टेव डालनेके लिए ही पर्युषणपर्वकी योजना की गई है। इन दश दिनोंमें जिस प्रकारका जीवन व्यतीत किया जाता है, उसी प्रकारका जीवन व्यतीत करनेकी टेव हमेशाको लिए पड़ जाय तो मनुष्य कृतकृत्य हो जाय।

यहाँ इस प्रश्नका खुलासा करनेकी आवश्यकता है कि पर्युषण पर्वके लिये भाद्रपदका महीना ही क्यों नियत किया गया? यह समय किसी ऐतिहासिक घटनाके स्मरणार्थ नहीं चुना गया है, अर्थात् न तो इन दिनोंमें पहले किसी महान् पुरुषका कोई कल्याणक हुआ है और न कोई विशेष स्मरणीय धार्मिक घटना हुई है। अतः मेरी समझमें तो इस चुनावका या पसन्दगीका कारण नैसर्गिक सौन्दर्य है। अर्थात् इस समय प्रकृतिके सारे पदार्थ आर्द्रता, नवीनता, सौन्दर्य और शक्ति प्राप्त करते हुए जान पड़ते हैं। सारा जगत् हँसता–खिलता–विकसता हुआ मालूम होता है। ये सब संयोग आत्मविकासके विचारोंके लिए बहुत ही अनुकुल हैं और इस लिए संभव है कि पर्युपासना, आत्मरमणता या देवीजीवनका परिचय करानेके कार्यके लिए यह समय पसन्द किया गया हो। लोगोंको इस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समय बहुत फुरसत मिल सकती है, इन दिनों मुनियों साधुओंका समागम हो सकता है, इत्यादि कई कारण इस विषयमें उपस्थित किये जाते हैं; परन्तु उनमें विशेष तथ्य नहीं जान पड़ता। एक तो साधु या मुनि प्रत्येक ग्राम या नगरमें उपस्थित नहीं हो सकते और दूसरे यह पर्व उस समयसे चला आ रहा है जब साधु मुनि बस्तीमें रहते ही न थे। प्राचीन कालमें आजकलकी अपेक्षा खेती अधिकतासे होती थी और जैनधर्मका पालन करनेवाले हजारों लाखों श्रावक खेती करते थे, इससे यह कहना भी ठीक नहीं कि फुरसतके कारण ये दिन पसन्द किये गये हैं। एक प्रश्न यह भी हो सकता है कि भादों सुदी ५ को ही पर्युषण पर्व शुरू हो और चतुर्दशीको ही समाप्त हो, इसका क्या कारण? क्या इनसे आगे पीछेके दिवसोंमें नैसर्गिक आकर्षण या सौन्दर्य कम हो जाता है? यदि मेरा कल्पना करनेका अधिकार छीना न जाय तो इसका उत्तर मैं यह दूँगा कि पर्युषण पर्वकी योजना करनेवाले महापुरुष यदि चाहते तो इनसे आगे पीछेके दिनोंमें भी इतनी ही योग्यताके साथ इस पर्वकी स्थापना कर सकते—उन्हें किसी तिथि या समयपर किसी तरहका राग द्वेष न था; परन्तु जब किसी समाजके लिए क़ायदे क़ानून बनाये जाते हैं तब कोई न कोई निश्चित बाततो मुकर्रर करनी ही पड़ती है। जैसे ‘ताजिरात हिन्द’ में किसी अपराधके लिए ५०) से १००) तकका दण्ड मुकर्रर है, तो इससे क्या यह समझ लेना चाहिए कि वह अपराध ५०) के ही योग्य है ४८) या ४९) के योग्य नहीं? ५०) से १००) तकके बदले ४०) से ६०) या ६०) से १२०) आदि और भी चाहे जो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संख्या नियत की जा सकती है और उसकी भी पहली संख्याके ही बराबर सार्थकता हो सकती है; परन्तु विचारनेकी बात यह है कि कोई न कोई संख्या तो नियत करनी ही पड़ेगी; समाजके व्यवहारके लिए यह है भी बहुत आवश्यक । इसी तरह चौदस, पूनों एकम आदि कोई न कोई एक तिथिका पर्युषणकी समाप्तिके लिए नियत करना आवश्यक था । क्यों कि एक तो इस अन्तिम दिनके आवश्यक कार्योंमें क्षमापना, प्रार्थना और विश्व-भावना आदि तत्त्वोंका खास तौरसे समावेश किया गया है, और दूसरे ये सब भावनायें सब स्थानोंमें एक ही समय हों तो इनका संयुक्त भावनाबलसे विश्वके मानसिक वातावरण पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। वर्तमान जैनसमाज क्षमापना अथवा हार्दिक औदार्यके रहस्यसे प्रायः अनभिज्ञ है; सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें जो विश्वभाव (लोकालोकस्वरूपकी कल्पना) प्राप्त होता है उसकी कल्पना नहीं कर सकता है, और प्रतिक्रमणके अन्तकी प्रार्थनाके तारसे जिन शक्तियोंकी वन्दना की जाती है उनका अपनेमें आकर्षण नहीं कर सकता है, इससे संभव है कि वह उपर्युक्त कारणोंकी गंभीरताको स्वीकार न कर सके; परन्तु उसके मानने न माननेसे उनकी सचाई कम नहीं हो सकती।

अब हमें वास्तविक महत्त्वके मुद्देपर आजाना चाहिए । किस प्रकारके जीवनका अभ्यास डालनेके लिए पर्युषण पर्वकी योजना की गई है? संक्षेपमें यदि हम कहें कि दैवी जीवनका, तो प्रश्न होता है कि क्या दैवी जीवन मानवीय जीवनसे भिन्न या विरुद्ध है? नहीं, जिस तरह एक मनुष्यका मनुष्यरूप जीवन होता है, उसी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तरह उसका मृत्युके वादकी स्थितिमें भी जीवन होता है—यह बात दूसरी है कि दोनोंमें स्थूल शरीरके सद्भाव और अभावका भेद हो। जिसतरह मनुष्यके इच्छायें, विचार, भावनायें, परिणाम, आदि बातें मनुष्य जीवनमें होती हैं उसी तरह मृत्युके बादकी स्थितिमें भी रहती हैं। प्रकृति किसी आकस्मिक परिवर्तन या रद्दो बदलको सहन नहीं कर सकती है। जो मनुष्य मनुष्यरूपमें संकीर्णहृदय है, वह बदलकर देवरूपमें विशाल हृदय कैसे हो जायगा? इसी तरह मनुष्यकी अवस्थामें जो शोकातुर उदास आनन्दरहित है वह मृत्युके बाद एकाएक छलांग मारकर शुद्ध आनन्दमय सिद्ध स्थितिमें कैसे पहुँच जायगा? यह मैं पहले ही कह चुका हूँ कि प्रकृतिके कार्योंमें उछल कूद या एकाएक बड़ाभारी परिवर्तन होना संभव नहीं है। इसलिए आनन्दस्वरूपकी भावना भाओ, आनन्द अनुभवन करनेका अभ्यास करो और संकटरूप परिस्थितियोंमें भी आत्मस्थिरता या आनन्दानुभव करना सीखो। ऐसा करनेसे तुम्हें टेव पड़ जायगी, धीरे धीरे वह टेव बलवती हो जायगी और अन्तमें तुम्हें अखण्ड आनन्दरूप स्थितिमें पहुँचा देगी। जिन क्रियाओंकी आत्मिक बलको बढ़ानेके आशयसे योजना की गई है, उन सबको करते हुए भी यदि तुम रोती सूरत बनाये रहोगे, उदास रहोगे, सर्वत्र दुःख तथा पापोंकी ही कल्पना किया करोगे और एक कोनेमें बैठकर बिना अर्थके स्तोत्रपाठ किया करोगे तो उक्त कल्पनाके अनुसार ही तुम्हारी मृत्युके बादका जीवन गढ़ा जायगा। और लोग चाहे जो कहें, पर हम जैनोंको तो 'जन्मघूँटी'के साथ ही यह ज्ञान पिला दिया जाता है कि आकाशमें कोई ऐसा राजा नहीं बैठा है जो प्रार्थनाओंकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

या स्तोत्रोंकी खुशामदसे प्रसन्न होकर स्वर्ग या मोक्ष दे देता हो, या अमुक अमुक कोरी भावशून्य क्रियाओंके करनेसे रीझकर सिद्धशिलाका निवास पारितोषिकमें दे देता हो। जब कोई देनेवाला है ही नहीं तब यही मानना अधिक युक्तियुक्त है कि एक जन्ममें जैसी इच्छायें, विचार और भावनायें होती हैं उन्हींके अनुसार जीवको नया स्वरूप प्राप्त होता है। देव स्थूल (औदारिक) देहके बन्धनसे रहित एक प्रकारके मनुष्य ही हैं, इसलिए जहाँ दैवी जीवनका उपदेश दिया जाय वहाँ उच्च मानवजीवन प्राप्त करनेका उपदेश समझना चाहिए।

तब उच्च मानव जीवनके अंग कौन कौन हैं? उच्चतम मनुष्य भगवान् महावीरने दान, शील, तप और भावना ये चार अंग उच्च जीवनके बतलाये हैं। उत्तमक्षमादि दश धर्म भी इन्हींमें गर्भित हैं। इन चार अंगोंका नामोच्चारण यद्यपि हम प्रतिदिन किया करते हैं; परन्तु इनका रहस्य[1] बहुत कम लोग समझते हैं और इसीलिए जैनोंका व्यवहार अथवा जीवन शुष्क, अनुदार और अनेक अंशोंमें घृणोत्पादक दिखलाई देता है। इन चार अंगोंसे उच्च मानवजीवनकी दीवाल खड़ी होती है और इन्हीं चार अंगोंकी कसरतके पर्युषण पर्वकी योजना की गई है। पर्युषण पर्वके समस्त कर्तव्य कर्मोंका इन्हीं चारके भीतर समावेश हो जाता है। *

---

१ तपका रहस्य और दानशीलका रहस्य जैनहितैषीके पिछले अंकोंमें निकल चुका है।

* जैनहितेच्छुके खास अंकसे अनुवादित।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पापका भान।

(महात्मा केशवचंद्रसेनकी डायरीसे)

मेरा हृदय निरन्तर यही पुकारता रहता है कि मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ। दो पहरको, शामको, हर समय जबतक कि मैं जागता रहता हूँ तबतक इस पापके भानको मैं दूर नहीं कर सकता। संसारके शब्दकोषमें चोरी, लूटमार आदि पाप कहे जाते हैं, पर मेरे शब्दकोषमें पापका अर्थ हृदयका काँटा, मनकी पीडित दशा और दुर्बलता है। पापी होनेकी कल्पनाको भी मेरा मन पाप समझता है। पापमय बर्तावको ही पाप मानकर मैं सन्तुष्ट नहीं हुआ; किन्तु पापी बननेकी योग्यताका होना, पापका पात्र होना यह भी मेरे मनको कष्ट पहुँचाता है। जब अन्तरात्माका प्रकाश पहली ही बार मेरे हृदयपर पड़ा, तब प्रमाद, जड़ता, निर्बलता और अनेक प्रकारकी विषयाभिलाषायें आदि छोटे बड़े पापोंको मैंने देखा। ये सब अनिष्टके मूलकारण वहाँ गुप्तरूपसे छुप रहे थे और यदि अन्तरात्माका प्रकाश उनपर पहले पड़ा हुआ होता तो वे इस समय देख भी न पड़ते। जबतक यह स्थूल शरीर है तब तक काम क्रोधादिके कारण भी हैं। मैं यह नहीं कहता कि मनुष्य पापमें ही पैदा हुआ है, किन्तु जब मनुष्यकी प्रवृत्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वासनाओंकी तृप्तिकी ओर झुकती है तब वह प्रवृत्ति पापसे ही पैदा होती है। जब कभी दूसरोंकी धन-सम्पत्ति देखकर क्षणभरके लिए भी मेरे मनमें यह विचार आता है कि इसकी धन-दौलत यदि मुझे मिल जाय तो कितना अच्छा हो, तब मैं अपनेको सच-मुच ही चोर समझता हूँ। जीवन जब संकटमें आ पड़ता है और मन निर्बल हो जाता है तब झूठ बोलनेमें आ जाता है और चाहे वह प्रत्यक्ष असत्य न भी हो तो भी अपने सामनेवालेके मनके ऊपर बुरा असर उत्पन्न करनेवाला हो जाता है। यह पाप है। इसी तरह मैं वास्तवमें जितना हूँ उससे अपनेको थोड़ा भी उच्च समझूँ, इसका नाम अभिमान है। हृदयमें दूसरोंकी अपेक्षा मैं अपनेको अधिक पसन्द करूँ और दूसरोंके सुखकी अपेक्षा अपने सुखके लिए अधिक प्रयत्न करूँ, इसमें स्वार्थपनेका अधिक पाप है। इस प्रकार मैं अपने हृदयमें छोटे-मोटे अनेक पापोंको देखता रहता हूँ, जो विष्ठाके कीड़ोंकी तरह मेरे हृदयमें निरन्तर हिरते-फिरते रहते हैं। मैंने अपने अन्तिम चबालीस वर्षोंमें ऐसे कितने पाप किये हैं यदि मैं उनकी गिननी करने बैठूँ तो उनकी संख्या करोड़ोंपर जा पहुँचेगी। मुझमें अन्तरात्माका बलवान् प्रकाश इतना अधिक व्याप्त हो रहा है कि उसमें सूक्ष्मसे सूक्ष्म पाप भी दृष्टिमें पड़े बिना नहीं रहता। यह पापका भान मुझे असह्य कष्ट पहुँचाता रहता है। मैं अपने मनकी स्थितिका इतना बलवान् साक्षी हूँ कि मानों मेरा जन्म इन पापोंकी गिनती करनेके लिए ही हुआ है, ऐसा मुझे जान पड़ता है। सबेरेसे साँझतक मैं इन्हीं पापोंको गिना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करता हूँ। ये पाप क्षणभरमें स्वार्थके रूपमें, क्षणभरमें अभिमानके रूपमें, क्षणभरमें लालसाओंके रूपमें, क्षणभरमें झूठके रूपमें, क्षणभरमें धन दौलतके गुमानके रूपमें और क्षणभरमें किसी और दूसरे ही रूपमें, इस तरह निरन्तर ही मुझे दर्शन दिया करते हैं। इनकी गिनतीका काम मेरी बुद्धि नहीं किन्तु हृदय करता है। मेरा हृदय सदा प्रज्वलित रहता है। उसे क्षणभरके लिए भी आराम नहीं। मकड़ीके जालेमें ज्योंही कोई मक्खी आकर फँसी कि मकड़ी तुरन्त ही उसे पकड़नेको दौड़ती है, ठीक उसी तरह मेरे आध्यात्मिक शरीरमें ज्योंही कोई पापरूपी मक्खी आकर फँसी कि उसे मेरा हृदय शीघ्र ही पकड़ लेता है।

जीवनके जिस किसी प्रदेशमें कोई बुरा विचार उत्पन्न हो, कर्त्तव्यका पूर्णतया पालन न हो, करने योग्य कोई श्रेष्ठ कार्य न किया जा सके, किसी पवित्र गुणकी निन्दा या बुराई हो जाय, अथवा अपनी कोई निर्बलता न सुधारी जा सके तो मेरा निरन्तर जागृत रहनेवाला उपयोगमय हृदय तुरन्त ही इन सब बातोंको देख लेता है। मेरा हृदय अन्त्यन्त ही सूक्ष्मदर्शी और मर्मका जाननेवाला है। मुझे दुखी बनानेकी इसमें बड़ी प्रचण्ड शक्ति है। मैं साधारण भावसे भी किसीका कुछ अपराध कर लेता हूँ तो मुझे सारे दिन–रात जरा भी चैन नहीं पड़ता। मैं अपने नौकरकी तनख्वाह यदि किसी दिन देरसे देता हूँ तो मेरा अन्तरात्मा एकदम पुकार उठता है कि "अरे ओ पापी, तू इतना अन्याय करता है!" कदाचित् मैं कहूँ कि तनख्वाह कल दूँगा, तो वह बोल उठता है कि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

" क्या तू आज खानेका कल खा सकेगा ? तू पैसेवाला है और सुखसे खाता–पीता है, इसलिए समझता नहीं है कि तेरा नौकर गरीब है और पैसेके बिना उस बेचारेको अनेक कष्ट सहना पड़ते हैं; इस दशामें भी तू उसकी चढ़ी हुई तनख्वाह कल देनेको कहता है !" इससे अधिक और क्या कहूँ ? दुनियामें ऐसा एक भी पाप नहीं जिसे मैं न कर सकूँ । अपनी इस स्थितिके देखते मेरी उन लोगोंपर भी श्रद्धा नहीं होती कि जो पवित्रपनेका अभिमान करते हैं । मुझे यदि कोई पापी कहे तो मैं ज़रा भी शरमिन्दा नहीं होता । और सच भी है कि जो मनुष्य हृदयमें रहनेवाले लाखों पापोंको हमेशा हीं गिना करता है, उसे यदि कोई पापी कहकर पुकारे तो उसके लिए बुरा क्यों माना जाय ? अरे लोगो, ज़रा आँखें खोलकर देखो कि जिसे तुम इतना मान देते हो, वह कैसा पापी है। तुम उस पापीको पापरूपमें देखतक नहीं सकते, विचार तक नहीं सकते इससे मेरा पश्चात्ताप, मेरा कष्ट बहुत ही उग्ररूप धारण कर उठता है ।

परन्तु परमात्माकी मुझपर कृपा है । इसलिए जब मैं दूसरी दृष्टिसे देखता हूँ तो मुझे जान पड़ता है कि मेरे समान सुखी मनुष्य थोड़े ही होंगे । ये पापरूपी नरकके कीड़े–जो आँख, कान, और जबानद्वारा उभराते रहते हैं तथा बाहर आते रहते हैं–मेरा हित ही करते हैं । एक ओर जैसे मैं नरकका सा अनुभव करता हूँ उसी तरह दूसरी ओर स्वर्गका सा अनुभव भी करता रहता हूँ । जो शरीर बहुत समयसे रोगवश हो रहा है और अनेक तरहकी व्याधियोंसे घिर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गया है उसमें रोगके स्थानका निर्णय करना बहुत ही कठिन है; परन्तु निरोगी शरीरमें व्याधिका चिह्न बहुत जल्दी जान लिया जाता है। यही कारण है कि अन्तरात्मा द्वारा प्रकाशित हृदयमें पापरूपी रोगका मुझे झटसे भान हो जाता है। मैं तुरन्त ही उसका उपचार करने लग जाता हूँ और तब मैं ईश्वराराधन और योगसाधनामें तल्लीन हो जाता हूँ। जो दस पाँच ही पापोंका भान मुझे होता रहता हो, या दस पाँच ही पापोंको मैं अपने द्वारा होनेकी कल्पना कर बैठूँ और उन्हें दूर होनेपर मैं अपने आत्माको पवित्र मान लूँ तो यह मेरी भूल होगी; पर मेरा अन्तरात्मा तो मुझमें असंख्य पापोंका भान सदा जागृत रखता है और एकके पीछे एकको, इसी तरह सब पापोंके दूर करने और आगे आगे उन्नति करते रहनेके लिए प्रेरणा करता रहता है। कभी नास्तिक दशामें मैं ऐसा भी बोल उठता हूँ कि "क्या ईश्वर है? खीष्ट और चैतन्यआदिके प्रकाशमय मुख क्या अब तक मौजूद हैं?" इस शंकाके समयमें मुझे कितना कष्ट होता है, उसे मैं क्या कहूँ? तब "अरे पापी! अब भी तू इस बातकी शंका करता है?" इस प्रकार कहकर और दौड़-धूप करके मैं शान्तिनगरके आनन्दाश्रममें प्रवेश करता हूँ। मनुष्य एकबार जब तक रोगी न हो तब तक उसे तन्दुरुस्तीकी कीमत मालूम नहीं होती। मैंने जिस प्रकार संतापका अनुभव किया है उसी प्रकार उससे छुटकारा पानेकी आनन्ददशाका भी अनुभव किया है। जिस प्रकार घड़ीका मिनिटका काटा निरन्तर टकटक करता रहता है उसी प्रकार मेरे हृदयमें भी स्वर उठता रहता है कि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

" अभी तुझे बहुत कुछ प्राप्त करना है । तू कुछ भी नहीं है । तेरी प्रगति अभी प्राथमिक स्थिति की है । " घोड़े पर जिस प्रकार चाबुककी मार पड़ती है उसी प्रकार मुझपर भी इस अन्तरस्वरके चाबुककी मार पड़ती रहती है । इन सबमें यदि मैं कुछ नयापन देखता हूँ तो वह यह है कि जब मैं रोता हूँ तब हँसता भी हूँ । ज्योंही मेरा रोना बढ़ता है त्योंही हँसना भी बढ़ता है । जो दवा तन्दुरुस्ती दे सकती है उसे ऐसा कौन अभागा होगा जो न पिये ? मैं तो यही चाहता हूँ कि मेरे पापोंका भान बढ़ता ही रहे । पापके भानमेंसे उत्पन्न होनेवाले पश्चात्ताप और कष्टादिको मैं सदा चाहता हूँ । परमात्माकी सत्ता ऐसी प्रेममय है कि कष्टोंमें भी वह आनन्द देती है । अपराधका जो भान कष्ट देता है वह आनन्द भी देता है । पापोंका पश्चात्ताप आत्माको परमात्माके साथ मिलाता है । परमात्माकी सत्ताको समझनेके बाद और उस सत्ताके साथ सम्मुखताका अनुभव किये बाद प्रायः कष्ट और सन्ताप कुछ गिनतीमें नहीं रहते । जिसने उस सत्ताको अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया उसे फिर किस बातकी चिन्ता ? इस सत्ताके साथमें बेचारे पापोंकी सत्ता किस खेतकी मूली है ?

मित्रो, मैंने तुम्हें जीवनकी अँधेरी और उजेली इन दोनों दिशाओंका ज्ञान कराया । जो तुमने कोई पाप किया हो तो अपने आत्माको असुखी होने दो । शान्तिस्वरूप परमात्मा तुम्हारे पास आकर तुम्हारे हृदयको अपनी स्वरूपभूत शान्तिसे खूब भर देगा ।

उदयलाल काशलीवाल ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनसिद्धान्तभास्कर।

(३)

भास्करकी दूसरी तीसरी किरणमें जितने लेख हैं उनमें 'पद्मपुराण' और 'हरिवंश पुराण' शीर्षक दो लेख उसके सम्पादककी योग्यताको बहुत ही स्पष्टतासे प्रकट करनेवाले हैं, इसलिए हम सबसे पहले उन्हींकी आलोचना करना चाहते हैं:—

इन लेखोंमें रविषेणाचार्यकृत पद्मपुराण और जिनसेनाचार्यकृत हरिवंशपुराणके मंगलाचरण, प्रशस्ति और कथासूत्रके श्लोक उद्धृत करके उनका अनुवाद लिख दिया गया है। अच्छा होता यदि सम्पादक महाशय अनुवाद प्रकाशित करनेकी कृपा न करते—इससे उनकी बहुत कुछ प्रतिष्ठा बनी रहती। ये अनुवाद साफ़ साफ़ बतला रहे हैं कि वे केवल संस्कृतज्ञानसे ही नहीं, विचारबुद्धिसे भी शून्य हैं। उनमें इतनी भी योग्यता नहीं कि अनुवादोंको पढ़कर यह जान लें कि इनमें कुछ दोष है या नहीं। दूसरोंसे लेख लिखवाने और लेख संग्रह करनेके सिवाय सम्पादकका यह भी कर्तव्य है कि वह दूसरोंके लेखोंकी जाँच कर सके—यह समझ सके कि वे प्रकाशित करने योग्य हैं या नहीं। पद्मपुराण और हरिवंशके उक्त लेखोंके विषयमें सेठ पदमराजजी यह कहकर छुट्टी नहीं पा सकते कि उनका अनुवाद स्वयं हमने नहीं किया है, इसलिए हम उसके उत्तरदाता नहीं हैं। यदि ऐसा कहेंगे तो वे विद्वानों-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की दृष्टिमें और भी गिर जायँगे—मानों वे यह बतला देंगे कि हम सम्पादकके कर्तव्यसे भी सर्वथा अज्ञान हैं।

पहली किरणमें पं० झमनलालजी महाशयने जो पाण्डित्य दिखलाया था इस किरण-युगलमें पं० हरनाथजी द्विवेदीने उसका भी नम्बर ले लिया। द्विवेदीजीने इन लेखोंमें केवल अपनी मूर्खताहीकी हद नहीं बतलाई है किन्तु अपने आश्रयदाता सेठजीको भी कलशेपर चढ़ा दिया है। इस अनुवादमें जो भूले हैं वे इतनी भद्दी हैं कि उन्हें जानकर स्वयं सेठ पद्मराजजी ही कह बैठेंगे कि हाय! मुझे इन पण्डितोंने बड़ा धोखा दिया! यद्यपि अनुवादकी एक भी पंक्ति ऐसी नहीं है जिसमें कोई न कोई भूल न हो; परन्तु हम यहाँ केवल वही अंश उद्धृत करेंगे जिससे पाठक सारे अनुवादकी उत्तमताका अनुमान कर सकें।

पद्मपुराण।

पद्मपुराणके प्रारंभमें ग्रन्थका संक्षिप्त कथासूत्र है। यह लगभग ९४ श्लोकोंमें है। इसे इस ग्रन्थका संक्षिप्त सूचीपत्र कहना चाहिए। इसका पहला श्लोक यह है:—

पद्मवेष्टितसम्बधकारणं तावदत्र च।
त्रैशलादिगतं वक्ष्ये सूत्र संक्षेपि तद्यथा॥ ४५॥

इसका भावार्थ यह है कि "मैं यहाँ उस कथासूत्रको सक्षेपमें कहूँगा जिसमें पद्मचरित (पद्मचेष्टित) के कहेजानेका कारण बतलाया है और जिसे त्रिशलाके पुत्र महावीर भगवान् आदिने प्रकट

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किया है।" पं० हरनाथजी इसका अनुवाद करते हैं—"त्रिशलादिनायकसम्बन्धी वृतान्त इस पद्मपुराणमें मैं कहता हूँ।" कहिए पाठक, आप क्या समझे? त्रिशलादिनायकसम्बन्धी वृत्तान्त आपने और भी कभी इस पुराणमें सुना था?

उपसर्गं जयन्तस्य केवलज्ञानसम्पदम्।
नागराजस्य संक्षोभं विद्याहरणसर्जने॥ ५२॥

इसका वास्तविक अर्थ इस प्रकार होता है—"संजयन्त नामक मुनिपर विद्युद्दंष्ट्र नामक विद्याधरके द्वारा अनेक तरहके उपसर्ग या उपद्रव होना, मुनिका केवलज्ञान प्राप्त करना, मुनि-उपसर्गके कारण धरणीन्द्रका विद्युद्दंष्ट्रपर क्रोधित होकर उसकी विद्यायें छीन-लेना और फिर यह बतलाना कि ये विद्यायें तुझे इस प्रकार तप आदि करनेसे फिर प्राप्त हो जायँगी।" द्विवेदीजी इसका अर्थ करते हैं—"जयन्तका उपसर्ग और केवल ज्ञानकी प्राप्ति, विद्याध्ययनाध्यापनमें नागराजका संक्षोभ।" क्या सेठ पदमराजजी अनुवादकके इस वाक्य—'विद्याध्ययनाध्यापनमें नागराजका संक्षोभ' का क्या अर्थ होता है बतलानेकी कृपा करेंगे? विद्या पढ़ने पढ़ानेसे नागराज नाराज़ हो गया, यही कि और कुछ?

अजितस्यावतरणं पूर्णाम्बुदसुतासुखम्।
विद्याधरकुमारस्य शरणं प्रतिसंश्रयम्॥ ५३॥

इसका सीधा अर्थ यह है—"अजितनाथका जन्म, पूर्णमेघके पुत्र मेघवाहनकी विपत्ति, और उस विद्याधरकुमार (मेघबाहन) का भागकर अजितनाथके समवसरणका आश्रय लेना।" पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुवादक महाशय इसका अर्थ करते हैं—"अजितनाथका अवतार, पूर्णाम्बुदकी लड़कीका सौख्य, विद्याधरकुमारकी शरण।" यदि थोड़ीसी तकलीफ़ उठाकर भाषा पद्मपुराण ही बाँच लिया होता तो बेचारा पूर्णमेघका लड़का लड़की होनेसे तो बच जाता !

तडित्केशस्य चरितमुदधेरमरस्य च।
किष्किन्धान्ध्रखगोत्पादं श्रीमालाखेचरागमम् ॥ ५६ ॥
वधाद्विजयसिंहस्य कोपं चाशनिवेगजम्।

इसका वास्तविक अर्थ यह है—" विद्युत्केश विद्याधरका चरित; उसकी रानी श्रीचन्द्राके कुचोंको उद्यानक्रीड़ाके समय एक बन्दरने नोच लिया इस कारण विद्युत्केशका उसे बाणसे मार डालना और उसका उदधिकुमार जातिका देव होना, इस तरह उदधिदेवका चरित; किष्किन्ध और अन्ध्रक विद्याधरोंकी उत्पत्ति, आदित्यपुरके राजकी कन्या श्रीमालाके स्वयम्बरके लिए विद्याधर राजाओंका आगमन, श्रीमालाका किष्किन्धको ब्याह लेनेके कारण विद्याधरोंमें युद्ध, उसमें विजयसिंहका मारा जाना और इस कारण उसके पिता अशनिवेगका क्रोधित होना।" परन्तु अनुवादक महाशय यह अर्थ करते हैं—" समुद्र—देवता तथा तडितकेशका चरित्र, विजयसिंहके मारनेसे वज्रसदृश वेगवाले क्रोधका वर्णन।" देखिए, कितने संक्षेपमें कर दिया ! द्विवेदीजीने समझा होगा कि जैनोंके यहाँ भी समुद्रको देवता माना होगा, इस लिए उसका चरित पद्मपुराणमें अवश्य लिखा होगा ! ५६ वें श्लोककी दूसरी तुकका अर्थ लिखनेकी तो आपने आवश्यकता ही न समझी। तीसरी तुकमें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बेचारे अशनिवेगकी तो खूब ही दुर्दशा कर डाली—क्रोधका विशेषण बनाकर उसके अस्तित्वको ही मिटा डाला!

कथासूत्रका साराका सारा अनुवाद इसी तरहका किया गया है। बेचारे द्विवेदीजी करें भी क्या? जैनपद्मपुराणकी कथाओंकी उन्हें कभी हवा भी लगी हो तब न? यह कार्य तो सेठ पदमराजजीका था—वे तो अपनेको जैनधर्मका भी विद्वान् समझते हैं; यदि एक नज़र इधर डाल लेते, तो यह अनर्थ क्यों होता?

ग्रन्थके अन्तिमभागके भी कुछ श्लोकोंके अनुवादका नमूना लीजिए:—

उपायाः परमार्थस्य कथितास्तत्त्वतो बुधाः
सेव्यतां शक्तितो येन निष्कामथ भवार्णवात् ॥ ३७ ॥

इसका अर्थ यह है कि "हे सज्जनो, परम अर्थ अर्थात् मोक्षके जो वास्तविक उपाय (दर्शन ज्ञान चारित्र) कहे गये हैं उन्हें अपनी शक्तिके अनुसार सेवन करो जिससे संसार समुद्रसे पार हो जाओ।" परन्तु अनुवादकजी कहते हैं—"परमार्थके ठीक ठीक उपाय विद्वान् ही (आप या सेठजी?) कहे गये हैं, इस लिए यथाशक्ति इनकी सेवा करके (अवश्य ही) संसार समुद्रसे आप लोग पार होंगे।" लीजिए, भास्करका यह नया सिद्धान्त सुन लीजिए और इसको शीघ्र अमलमें लाइए।

यह समझमें न आया कि पद्मपुराणके मंगलाचरण कथासूत्र आदिमें ये १२ पृष्ठ क्यों काले किये गये? इनमें ग्रन्थकर्त्ताका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नाम और ग्रन्थनिर्माण समय, इन दो बातोंके सिवाय और तो कोई भी ऐतिहासिक बात नहीं आई। बल्कि ग्रन्थान्तके जिन ५-६ श्लोकोंमें रविषेणने अपनी गुरुपरम्परा—' इन्द्रगुरु-दिवाकरयति-अर्हन्मुनि-लक्ष्मणसेन-रविषेण'—बतलाई है उनका ही लोप कर दिया। ये श्लोक प्रायः सब ही प्रतियोंमें मिलते हैं, और भाषा-वचनिकामें भी इनका अर्थ किया गया है, फिर मालूम नहीं सम्पादकने उक्त श्लोकोंको इतिहासकी चीज़ क्यों न समझा? कथासूत्र आदिका उपयोग तो तब मालूम होता जब सम्पादक महाशय इस ग्रन्थके विषयमें एकाध स्वतंत्र लेख लिखनेकी कृपा करते और उसमें रविषेण आदिके विषयमें कुछ नया प्रकाश डालते। पर यह लिखें कैसे? इसके लिए तो परिश्रमकी ज़रूरत होती है! बिना परिश्रमके ही प्रशंसाकी लूट करनेवाले भला इस झंझटमें क्यों पड़ने लगे!

हरिवंशपुराण।

अब हरिवंशपुराणके मंगलाचरणादिके अनुवादके भी कुछ नमूने देख लीजिए:—

जीवसिद्धिविधायीह कृतयुक्त्यनुशासनम्।
वचः समन्तभद्रस्य वीरस्येव विजृम्भते॥ ३०॥

इस श्लोकका भावार्थ यह है कि "'समन्तभद्राचार्यके वचन—जो कि 'जीवसिद्धि' और 'युक्त्यनुशासन' नामक शास्त्रोंके प्रगट करनेवाले हैं—महावीर भगवानके वचनोंके समान प्रकाशित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं । " परन्तु द्विवेदीजी इसका अर्थ करते हैं–" संसारमें जीवसिद्धि करके अकाट्य युक्तियोंसे भरी हुई संभ्रान्त वीरकेसे श्रीसमन्तभद्र स्वामीकी बातें आज सर्वत्र माननीय हो रही हैं। " बेचारे द्विवेदीजी तो ठहरे कोरे काव्यतीर्थ, इसलिए वे तो समझें ही क्या कि जीवसिद्धि और युक्त्यनुशासन नामके कोई ग्रन्थ भी हैं–उन्हें तो अपना विभक्त्यर्थ करनेसे मतलब; और सम्पादक ठहरे सेठजी, उन्हें अपने सैकड़ों कामोंके मारे फुरसत कहाँ जो ऐसी बातें सोच सकें ? इसके आगेके प्रायः सभी श्लोकोंका अर्थ ऐसा ही ऊटपटाँग किया गया है ।

महासेनस्य मधुरा शीलालङ्कारधारिणी ।
कथा न वर्णिता केन वनितेव सुलोचना ॥ ३४ ॥

इस श्लोकमें महासेन कविके ' सुलोचना कथा ' नामक काव्यका उल्लेख किया गया है, परन्तु उसे कथाका विशेषण मानकर यह अर्थ किया गया है–" सुन्दर आँखवाली स्त्रीकी सी महासेनकी विनयालंकारालंकृता कथा कौन नहीं वर्णित करेगा ? "

कृतपद्मोदयोद्योता प्रत्यहं परिवर्तिता ।
मूर्तिः काव्यमयी लोके रवेरिव रवेः प्रिया ॥ ३५ ॥

वरांगनेव सर्वांगैर्वरांगचरितार्थवाक् ।
कस्य नोत्पादयेद्गाढमनुरागं स्वगोचरम् ॥ ३६ ॥

इन श्लोकोंमें पद्मपुराणके कर्त्ता रविषेणकी और उनकी रचनाकी प्रशंसा की गई है । इनका भावार्थ इस प्रकार है–ये बड़े ही सुंदर श्लोक हैं—" रवि (सूर्य) के समान पद्मोदय करनेवाली

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(कमलोंको खिलानेवाली और कविके पक्षमें पद्मपुराणको रचनेवाली), रविषेणकी काव्यमयी प्यारी मूर्ति इस लोकमें प्रतिदिन परिवर्तित होती रहती है (सूर्य प्रतिदिन परिवर्तन करता रहता है और कविके काव्यकी प्रतिदिन आवृत्तियाँ होती रहती हैं) । उन्हीं रविषेणका वरांगचरित नामका काव्य वारांगनाके समान किसको स्वानुभवगोचर गहरा अनुराग उत्पन्न नहीं करता ? " भास्करमें इसका अर्थ इस प्रकार किया गया है-" प्रतिदिन काव्यशोभा अथवा लक्ष्मीको बढ़ानेवाली संसारमें काव्यमूर्तिकी सी सूर्यप्रियाकी नाईं वरांग शब्दको चरितार्थ करनेवाली वरांगनाकी ऐसी कविता भला किसके मनमें सुभग अनुराग उत्पन्न नहीं करती । " सावधान पाठक ! कहीं बींचमें ठहर न जाइए, बराबर एक स्वासमें पूरा पाठ पढ़ जाइए ! रहा अर्थ, सो उसकी तो आप चिन्ता ही मत कीजिए, इन वाक्योंपरसे उसका समझना तो छद्मस्थोंकी बुद्धिसे अतीत

हरिवंशपुराणके मंगलाचरणादिकी प्रत्येक पंक्ति अशुद्धियोंसे भरी हुई है । इतना स्थान नहीं कि उन सब अशुद्धियोंकी अलोचना की जाय—पाठकोंको वह रुचिकर भी नहीं हो सकती) मालूम नहीं सेठजी ऐसे अनधिकारी लोगोंके हाथसे जैनग्रन्थोंके अभिप्रायोंकी यह दुर्दशा क्यों कराते हैं ?

चन्द्रगिरिका परिचय ।

यह लेख छह पेजका है । इसमें श्रवणबेलगुलके चन्द्रगिरि नामक पर्वतका और उसपरके मन्दिर आदिका वर्णन है । संभवतः यह राइस साहबके अँगरेज़ी ग्रन्थ ' इनस्क्रप्शन एट् श्रवणबेल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोलके आधारसे लिखा गया है और इसी कारण इसमें अत्युक्तियों और अति प्रशंसाओंका अभाव न होनेपर भी ऊँटपटाँग बातें बहुत कम हैं। इसमें एक जगह लिखा है कि महाराज अशोकने श्रवणबेलगुल ग्रामके नाममें सरोवर शब्द जोड़ दिया। पर यह न मालूम हुआ कि इसके लिए कुछ प्रमाण भी है या नहीं। चन्द्रगुप्तबस्ती नामक मन्दिरके विषयमें भी लिखा है कि उसे सम्राट् अशोकने बनवाया था। इससे मालूम होता है कि सम्पादक महाशय अशोकको भी जैन समझते हैं! पहले अंकके चन्द्रगुप्तवाले लेखमें उन्होंने एक जगह लिखा भी है कि अशोक अपने राज्याभिषेकके १३ वें वर्ष तक जैन था—पीछे बौद्ध हो गया था। परन्तु यह निरी गप्प है और साम्प्रदायिक मोहवश लिखी गई है। बौद्धधर्म धारण करनेके पहले वह वेदानुयायी था—कमसे कम यह तो निश्चित है कि जैन नहीं था। अपने गिरनारके पहले शिलालेखमें वह स्पष्ट शब्दोंमें लिखता है कि—" पहले मेरी पाकशालामें प्रतिदिन हजारों जीव मारे जाते थे; परन्तु अब (बौद्धधर्म धारण करने पर) भोजनके लिए केवल तीन ही प्राणी मारे जाते हैं और आगे ये भी न मारे जायँगे। " इससे स्पष्ट है कि वह पहले मांसभक्षी अजैन था। इस विषयमें और भी अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं। सम्पादक महाशयके पास जैन होनेके कोई प्रमाण हों तो उन्हें प्रकट करना चाहिए। कमसे कम किसी जैनग्रन्थका ही प्रमाण देना चाहिए जिसमें लिखा हो कि अशोक जैन था।

बाहुबलिस्वामीकी प्रतिमापर एक तरफ लिखा है कि चामुण्डरायने बनवाई और दूसरी ओर लिखा है कि गंगराजने चैत्यालय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बनवाया। सम्पादक महाशय कहते हैं कि "ये गंगकुलोत्पन्न परम जैनधर्माभिमानी महाराज गंगराज चामुण्डरायके दो सौ वर्ष पीछे हुए हैं।" परन्तु गंगराज गंगकुलके किस राजाका नाम था और उसने कबसे कब तक राज्य किया है यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं समझते। हमारी समझमें चामुण्डराय जिनके मंत्री थे वे महाराज राचमल्ल ही उक्त चैत्यालयके बनवानेवाले होंगे। वे गंगवंशके ही थे और जैनधर्मके अनुयायी थे। गंगराज नाम उन्हींके लिए आया है। जब दोनों लेख एक ही समयके लिखे हुए हैं तब गंगराजको चामुण्डरायके २०० वर्ष बादका बतलाना असंगत है। हाँ, राचमल्लके एक भाईका नाम रक्कस गंगराज था। उसने ई० सन् ९९७ से १००८ तक राज्य किया है। प्रसिद्ध जैन कवि नागवर्मा (चामुण्डरायके गुरु अजितसेनका शिष्य) इसका आश्रित कवि था। संभव है कि गंगराज उसीका संक्षिप्त नाम हो। गरज यह कि राचमल्ल या उनका भाई, इन दोमेंसे किसी एकको चैत्यालयका बनवानेवाला समझना चाहिए।

इस लेखमें भी सम्पादकने तीन चार प्रतिज्ञायें की हैं जो अभीतक पूरी नहीं हुई हैं और शायद आगे भी न होंगी। इस तरहकी प्रतिज्ञायें करना उनकी लेखशैलीमें दाखिल है!

इस लेखमें चन्द्रगुप्तबस्ती आदिके जो ४–९ चित्र दिये हैं, वे राइस साहबकी पुस्तकसे ज्योंके त्यों उतार लिये गये हैं। उस समय फोटो आदि लेनेका अधिक सुभीता न होगा, इसलिये राइससाहबने मन्दिरोंके रेखाचित्र हाथसे खींच लिये होंगे और उन्हें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ही पुस्तकमें छपवा दिया होगा। बड़े अफसोसकी बात है कि जो जो सम्पादक अपने पत्रके एक एक अंकको एक एक वर्षमें तैयार करते हैं और इसका कारण साधनसामग्री जोड़नेका अटूट परिश्रम बतलाते हैं तथा जो प्रत्येक अंकके लिए हजार हजार रुपया खर्च कर डालते हैं उनसे उक्त मन्दिरोंकी ताजा फोटो मँगवाकर न लगवाई गई !

दिगम्बरमतपर एक विदेशी विद्वान्का विचार।

यह एक पादरी साहबके अँगरेजी लेखका अनुवाद है; पर यह नहीं बतलाया गया कि मूल लेख किस पुस्तकपरसे लिया गया और वह किस समयका लिखा हुआ है। लेख अच्छा है, पर पुराना मालूम होता है और इस कारण उसमें कई भ्रमपूर्ण बातें मौजूद हैं जिन्हें इस समयके इतिहासज्ञ नहीं मानते। जैसे, इसमें एक जगह लिखा है कि गौतम (इन्द्रभूति) महावीरके शिष्य थे और वही पीछेसे बुद्ध नामसे प्रसिद्ध हुए। पर यह भ्रम है। महावीरके शिष्य गौतम गणधरसे गौतम बुद्ध पृथक् व्यक्ति हैं। पहले ब्राह्मण थे और दूसरे क्षत्रिय राजपुत्र। ग्रीक लोगोंने जिन जिम्नासोफिस्ट साधुओंका उल्लेख किया है उनको दिगम्बरजैन-सम्प्रदायके साधु सिद्ध करना बहुत कठिन है। उनकी चर्या दिगम्बर जैनसाधुओंसे बहुत भिन्न बतलाई गई है। केवल नग्न होनेसे या मांसभोजी न होनेसे उन्हें दिगम्बर कहना जबरदस्ती है। सिकन्दर बादशाहने जिस जिम्नासोफिस्ट साधुके पास अपना दूत भेजा था, वह ईश्वरका कर्तृत्व माननेवाला, अपक्व फलमूल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खानेवाला और नदीका जल पीनेवाला था। मालूम नहीं मूल लेखकका ध्यान इन बातोंकी ओर क्यों नहीं गया। इसमें एक जगह लिखा है कि "कपिलके बाद भारतवर्षमें जिनके धार्मिक साम्राज्यका डंका बज गया था वह जैनियोंके तत्त्ववेत्ता प्रातःस्मरणीय तीर्थंकर श्री १००८ पार्श्वनाथ स्वामी थे।" क्या ये 'प्रातःस्मरणीय' आदि शब्द मूल लेखक पादरी साहबके लिखे हुए हैं? हमारी समझमें एक पादरी इस तरह कभी नहीं लिख सकता, तब सम्पादक महाशयको या अनुवादक महाशयको क्या आवश्यकता थी कि अपनी भक्ति और श्रद्धाको दूसरेके लेखमें घुसकर प्रकाशित करें? क्या आश्चर्य है कि लेखके अन्यान्य अंशोंमें भी इस भक्ति और श्रद्धाके मोहसे—जिसका इतिहाससे कोई सम्बन्ध नहीं है—सम्पादक महाशयने मूल लेखकके विचारोंमें भी थोड़ा बहुत परिवर्तन कर दिया हो और तब हम कैसे विश्वास कर सकते हैं कि लेखके सब विचार मूल लेखकके हैं? ऐसे अनुवादोंपर विश्वास करना जोखिमका काम है। एक ऐतिहासिक पत्रके अभिमानी सम्पादकको अनुवादकके उत्तरदायित्वका इतना भी ज्ञान न होना आश्चर्यका विषय है।

जिनसेनाचार्यका पाण्डित्य।

इसके लेखक पं० हरनाथजी द्विवेदी हैं। आपने आदिपुराणसे बहुतसे श्लोक उद्धृत करके यह बतलाया है कि जिनसेन स्वामी बड़े नामी कवि थे, उनकी उपमा, उत्प्रेक्षा, व्याकरणज्ञता आदि बहुत ऊँचे दर्जेकी की हैं। इस विषयमें हमें कुछ कहना नहीं है, हम भी जिनसेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वामीको अच्छा कवि समझते हैं; परन्तु द्विवेदीजीने यह लेख हमारा विश्वास है कि केवल अपने सेठजीको प्रसन्न करनेके लिए लिखा है; उनके हृदयसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। लेखमें तथ्य भी बहुत थोड़ा है। शब्दाम्बर और प्रशंसाकी भरमार ही अधिक है। बहुतसी अप्रासङ्गिक बातें भी लिख दी गई हैं। एक जगह आपने मालूम नहीं किसको लक्ष्य करके यह लिखा है कि—"कितने ही लोग भगवज्जिनसेनको एक साधारण विद्वान् निश्चित करनेके लिए लम्बी चौड़ी चेष्टा कर रहे हैं।" और फिर इसके लिए आपने पंचमकालको दोष दिया है। यह तो आपने एक ही कही। अरे भाई, उन्हें साधारण विद्वान् कौन बनाता है सो तो बतला दो; व्यर्थ ही पंचमकालको क्यों कोस रहे हो? एक इतिहासके पत्रमें इस प्रकारकी बातें अच्छी नहीं मालूम होतीं। किसीके बनानेसे कोई छोटा बड़ा नहीं बन सकता-जो जितना होता है उतना ही रहता है। आप जैसे चाहे जितने किरायेके लेखक मिल जावें, पर क्या आप समझते हैं कि इससे आपके सम्पादक महाशयकी योग्यता बढ़ जायगी? कभी नहीं।

लेखके अन्तिम भागमें जिनसेन और कालिदासके समान-भावव्यंजक दो दो श्लोक उद्धृत किये गये हैं। द्विवेदीजीने वास्तवमें अपने आन्तरिक विश्वासके अनुसार दिखलाना तो यह चाहा है कि कालिदासकी छाया लेकर जिनसेनने अपने श्लोक रचे हैं, परन्तु अपने भोले सेठजीको प्रसन्न करनेके लिए इस समानताका निष्कर्ष यह निकाला है—"उक्त श्लोकोंसे पाठक स्वयं विचार कर सकते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कि भगवज्जिनसेन और कविवर कालिदास ये दोनों समसामयिक कवि अपने काव्यमें सर्वोत्कष्टता दिखलानेके लिए कितना प्रयास करते थे ? केवल प्रयास ही तक नहीं बल्कि सफलता भी प्राप्त करते थे, जिसकी साक्षिता उपर्युक्त पद्य ही दे रहे हैं । " वाह द्विवेदीजी ! इस जगह तो आपने सेठजीको खूब ही बनाया । हम लोगोंकी छोटीसी समझमें तो यह बात नहीं आई कि जो श्लोक बिलकुल मिलते-जुलते हुए हैं वे अपने अपने काव्यमें सर्वोत्कृष्टता दिखलानेके लिये बने हुए कैसे कहे जासकते हैं ? उनके विषयमें ऐसा क्यों न कहा जाय कि एकने दूसरेकी छाया ली है ? यदि आप कालिदास और जिनसेनको समसामयिक कहते हैं और सेठजीका ही मन रखना चाहते हैं तो यही क्यों नहीं कहते कि कालिदासने जिनसेनके श्लोकोंकी छाया ली है ? पर ऐसा आप क्यों लिखने लगे ? आप तो बेचारे सेठजीको बना रहे हैं !

अन्तमें आदिपुराणका एक श्लोक दिया है जिसमें ' अमोघशासन ' शब्द आया है । इस श्लोकमें राजा वज्रजंघके राज्यशासनकी प्रशंसा की गई है । इसके केवल ' अमोघ ' शब्दसे यह अर्थ निकालना कि कविने अमोघवर्ष महाराजका स्मरण किया है, ज़बर्दस्तीके सिवाय कुछ नहीं है । (क्रमशः)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विधवा-सम्बोधन ।

(१)

विधवा बहिन, समझ नहिं पडता, क्यों उदास हो बैठी हो,
क्यों कर्तव्यविहीन हुई तुम, निजानन्द खो बैठी हो ।
कहाँ गई वह कान्ति, लालिमा, खोई चंचलताई है,
सब प्रकारसे निरुत्साहकी, छाया तुमपर छाई है ॥

(२)

अंगोपांग न विकल हुए कुछ, तनुमें रोग न व्यापा है;
और शिथिलता लानेवाला, आया नहीं बुढापा है ।
मुरझाया पर वदन, न दिखती जीनेकी अभिलाषा है,
गहरी आहें निकल रही हैं, मुँहसे, घोर निराशा है ॥

(३)

हुआ हाल क्यों भगिनी ऐसा, कौन विचार समाया है,
जिसने करके विकल हृदयको, 'आपा' भाव भुलाया है ।
निजपर का नहिं ज्ञान, सदा अपध्यान हृदयमें छाया है
भववनमें न भटकनेका भय, क्या अन्धेर मचाया है ॥

(४)

शोकी होना स्वात्मक्षेत्रमें, पाप बीजका बोना है,
जिसका फल अनेक दुःखोंका संगम आगे होना है ।
शोक किये क्या लाभ ? व्यर्थ ही अकर्मण्यअन जाना है,
आत्मलाभसे वंचित होकर, फिर पीछे पछताना है ॥

(५)

योग अनिष्ट, वियोग इष्टका, अघतरु दो फल लाता है,
फल नहिं खाना वृक्ष जलाना, इह परभव सुखदाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इससे पतिवियोगमें दुख कर, भला न पाप कमाना है,
किन्तु स्व-पर-हितसाधनमें ही, उत्तम योग लगाना है ॥

(६)

आत्मोन्नतिमें यत्न श्रेष्ठ है, जिस विधि हो उसको करना,
उसके लिए लोकलज्जा अपमानादिकसे नहिं डरना ।
जो स्वतंत्रता लाभ हुआ है, दैवयोगसे सुखकारी,
दुरुपयोगकर उसे न खोओ, जिससे हो पीछे ख्वारी ॥

(७)

माना हमने, हुआ, हो रहा, तुमपर अत्याचार बड़ा,
साथ तुम्हारे पंचजनोंका, होता है व्यवहार कड़ा ।
पर तुमने इसके विरोधमें, किया न जब प्रतिरोध खड़ा,
तब क्या स्वत्व भुलाकर तुमने, किया नहीं अपराध बड़ा ?

(८)

स्वार्थसाधु नहिं दया करेंगे, उनसे इस अभिलाषाको-
छोड़, स्वावलम्बिनी बनो तुम, पूर्ण करो निज आशाको
सावधान हो स्वबल बढ़ाओ, निजसमाज उत्थान करो,
'दैव दुर्बलोंका घातक' इस नीतिवाक्यपर ध्यान करो ॥

(९)

बिना भावके बाह्यक्रियासे, धर्म नहीं बन आता है,
रक्खो सदा ध्यानमें इसको, यह आगम बतलाता है ।
भाव बिना जो व्रत नियमादिक, करके ढोंग बनाता है,
आत्मपतित होकर वह मानव, ठग-दंभी कहलाता है ॥

(१०)

इससे लोकदिखावा करके, धर्मस्वाँग तुम मत धरना,
सरल चित्तसे जो बन आए, भावसहित सोही करना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रबल न होने पायँ कषायें, लक्ष्य सदा इसपर रखना,
स्वार्थत्यागके पुण्य पन्थपर, सदा काल चलते रहना ॥

(११)

क्षत्रभंगुर सब ठाठ जगतके, इनपर मत मोहित होना
काया मायाके धोखेमें, पड़, अचेत हो नहिं सोना ।
दुर्लभ मनुज जन्मको पाकर, निजकर्तव्य समझ लेना,
उसहीके पालनमें तत्पर, रह, प्रमादको तज देना ॥

(१२)

दीन दुखी जीवोंकी सेवा, करनी सीखो हितकारी,
दीनावस्था दूर तुम्हारी, हो जाए जिससे सारी ।
दे करके अवलम्ब उठाओ निर्बल जीवोंको प्यारी,
इससे वृद्धि तुम्हारे बलकी, निःसंशय होगी भारी ॥

(१३)

हो विवेक जागृत भारतमें, इसका यत्न महान् करो,
अज्ञ जगतको उसके दुख दारिद्य आदिका ज्ञान करो ।
फैलाओ सत्कर्म जगतमें, सबको दिलसे प्यार करो,
बने जहाँ तक इस जीवनमें, औरोंका उपकार करो ॥

(१४)

'युग-वीरा' बनकर स्वदेशका फिरसे तुम उत्थान करो,
मैत्री भाव सभीसे रखकर, गुणियोंका सन्मान करो ।
उन्नत होगा आत्म तुम्हारा, इन ही सकल उपायोंसे,
शांति मिलेगी, दुःख टलेगा, छूटोगी विपदाओंसे ॥

देवबन्द, जि० सहानुपुर
ता. १९-७-१५

समाजसेवक--
जुगलकिशोर मुख्तार ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्वालापुर महाविद्यालय और गुरुकुल कांगड़ी।

उक्त दोनों संस्थायें आर्यसमाजकी हैं। पहली संस्था अर्थात् महाविद्यालय हरिद्वारसे लगभग ३ मीलके अंतरपर ज्वालापुरके निकट रेलकी सड़क पर एक बड़े रम्य और विशाल क्षेत्र पर स्थित है। इसे आर्यसमाजके प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी दर्शनानंदजीने स्थापित किया था। इसमें संस्कृत प्रथम भाषा और अँगरेजी द्वितीय भाषाके तौर-पर पढाई जाती है। इस समय इसमें लगभग ८० विद्यार्थी अध्ययन कर रहे हैं। समस्त विद्यार्थी ब्रह्मचारी हैं। इनके माता पिताओंने विद्यार्थी अवस्था पर्यंतके लिए इन्हें विद्यालयके संरक्षणमें छोड़ दिया है। इस विद्यालयमें विद्यार्थियोंसे किसी प्रकारकी कोई फीस वगैरह नहीं ली जाती। सम्पूर्ण खर्च विद्यालयको ही उठाना होता है।

इस विद्यालयमें जितने अध्यायक हैं, सब विद्वान् हैं। विद्वानोंकी यहाँ बहुत अच्छी मंडली है। यद्यपि यहाँ पर संस्कृतज्ञ विद्वानोंकी ही बहुलता है तथापि इससे अँगरेजी आदिकी शिक्षामें किसी प्रकारकी क्षति नहीं रहती है, कारण कि जितने भी कार्यकर्त्ता हैं सब समयके अनुसार उपयोगी शिक्षाकी आवश्यकताको समझे हुए हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचारी देखनेमें बड़े सुंदर स्वस्थ और प्रसन्नचित्त मालूम होते हैं। उनकी आकृतिसे मालूम होता है कि एकदिन ये लोग बड़े विद्वान् होंगे और इनके द्वारा आर्यसमाजके सिद्धांतोंका बहुत प्रचार होगा। बच्चोंमें आपसमें बड़ा प्रेम है। पढ़ने लिखनेकी तरफ़ विशेष रुचि है। पाठ्य पुस्तकोंके अतिरिक्त अन्य पुस्तकें भी बड़े प्रेमसे पढ़ते हैं।

इस विद्यालयका प्रबंध भी बहुत प्रशंसनीय है। बच्चोंके चरित्र-गठनकी ओर प्रबंधकोंका विशेष ध्यान है। ब्रह्मचर्यकी पूर्ण रूपसे रक्षा कराई जाती है। खेल कूद और व्यायामका भी पूरा पूरा ख़याल रक्खा जाता है। विद्यालयके पास ही नहर है जिसमें बच्चे खूब तैरते हैं।

पाकशाला, यज्ञशाला तथा स्नानागार बड़े ही उत्तम और उचित रूपसे बने हुए हैं। भोजनशाला इतनी बड़ी है कि उसमें एक साथ ७०, ८० ब्रह्मचारी बैठकर भोजन कर सकते हैं। वह इतनी साफ़ रहती है कि कहीं एक तिनका भी दिखलाई नहीं देता। यज्ञ-शाला इतनी विशाल है कि १००–१५० व्यक्ति चारों ओर बैठकर आनंदसे हवन कर सकते हैं। स्नानागार भी इतना विस्तरित है कि ४०, ५० विद्यार्थी एक समयमें स्नान कर सकते हैं। फरश तीनों स्थानोंका पक्का बना हुआ है। पानीसे धो डालनेसे सब साफ़ हो जाता है।

यहाँका औषधालय भी विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। जो वैद्य यहाँपर हैं वे बड़े ही योग्य और अनुभवी हैं और इतने प्रसिद्ध हैं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कि बाहरसे भी इलाजके लिए लोग उनके पास आते हैं और ओषधि मँगाते हैं।

भारतोदय नामका हिन्दी साप्ताहिक पत्र भी यहाँसे निकलता है।

यहाँके अधिष्ठाता तथा कार्यकर्ता बड़े ही सज्जन पुरुष हैं। उनका व्यवहार दर्शकों प्रति बड़ा चित्ताकर्षक है। इस विद्यालयमें दिखावा बहुत कम है और काम बहुत ज्यादह होता है। यहाँके पठनक्रमसे यद्यपि हम पूर्ण रूपसे सहमत नहीं हैं; परंतु यह एक ऐसा प्रश्न है कि जिसका सम्बंध विद्यालयकी कमेटी अथवा आर्यसमाजसे है। चाहे पठनक्रम कुछ हो, तात्पर्य इससे है कि बालकोंपर शिक्षाका क्या प्रभाव पड़ता है। आया बालकोंका स्वास्थ्य और उनका ज्ञान बढ़ता है या नहीं? सो दोनों चीजें यहाँ पर बढ़ रही हैं। बच्चोंका चरित्रगठन खूब होता है। यहाँकी शिक्षा पक्षपातरहित उदार है। यद्यपि यह संस्था आर्यसमाजकी है परंतु बच्चोंके हृदयोंमें पक्षपातका बीज यहाँ नहीं बोया जाता और न किसी धर्मविशेषसे अथवा व्यक्तिविशेषसे द्वेष रखना सिखलाया जाता है। हमने विद्यालयके एक कमरेमें दिगम्बर जैनद्वारा प्रकाशित स्वर्गीय सेठ माणिकचन्द्रजीका कैलेंडर भी लटका हुआ देखा। जान पड़ता है कि अब पक्षपात और द्वेष संसारसे कम होता जाता है। जैनियोंको भी कम कर देना उचित है। अब समय इस बातका है कि प्रेमसे अपने मतके सिद्धान्तोंका प्रकाश किया जाय। आपसमें लड़ने भिड़ने और द्वेषभाव रखनेका अब समय नहीं रहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरी संस्थाका नाम **गुरुकुल कांगड़ी** है। यह बहुत पुरानी और बड़ी संस्था है। इसके देखनेकी इच्छा हमारे मनमें बर्षोंसे थी। हरिद्वारसे दो मीलके अंतर पर कनखल है। कनखलसे गंगापार करके पैदल सैर करते हुए गंगाकी घाटियोंमेंसे होते हुए हम गुरुकुल पहुँचे। रास्तेमें ऐसे जंगल पड़ते हैं कि कहीं मनुष्यकी परछांई भी दिखलाई नहीं देती। वास्तवमें गुरुकुल जैसी संस्थाका ऐसे ही स्थान पर होना उपयुक्त है।

गुरुकुलकी इमारतसे बाहर, बाहरसे आये हुए लोगोंके लिए एक धर्मशाला बनी हुई है। उसीमें हम ठहरे। थोड़ी ही देर हुई थी कि इतनेमें गुरुकुलका चपरासी आया और उसने हमसे स्नान वगैरहके लिए कहा। हम स्नान ध्यान वगैरहसे निवृत्त होकर डेरेसे चले थे। तब वह हमको बड़े प्रेमके साथ भोजन-शालामें ले गया। भोजनशालामें हमारा पहुँचना था कि वहाँके प्रबंधकोंने बिना किसी प्रकारकी जान पहिचानके हमारा बड़ा आदर सत्कार किया और बड़े प्रेमके साथ हमको भोजन कराया। कुछ ब्रह्मचारी लोग भी हमारे साथ भोजन कर रहे थे। भोजन सादा, हल्का और बलबर्धक था। दाल तरकारीमें स्वास्थ्यको बिगाड़नेवाले मसाले नहीं थे। सबसे उत्तम पदार्थ जो देखनेमें आया वह मीठा शुद्ध दही था। मीठा दही कितना रुचिकर और लाभदायक होता है इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं। दही छाँछ मट्ठ वगैरह पदार्थ यहाँ उमदा और ज्यादह मिलते हैं। शहरोंमें अच्छे अच्छे अमीर लोग भी इनके लिए तरसते हैं। मिठाइयाँ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और मसाले यहाँ खानेको नहीं नहीं दिये जाते; किंतु दूध, मीठा दही, फल तरकारी तथा हरी चीजें जितनी मिल सकती हैं दी जाती हैं। दूध दहीके लिए गोशाला है जिसमें दूध देनेवाली गायोंकी बड़ी संख्या है। हरी तरकारीके लिए खेत और बाड़े है जिनमें ऋतुओंकी तमाम चीजें पैदा होती हैं।

भोजन करनेके पश्चात् आश्रमको देखा। इस समय इसमें ३१५ ब्रह्मचारी हैं। स्कूल और कालिज दो पृथक् पृथक् विभाग हैं। दोनोंके रहन सहन, खान पान, पठन पाठनका पृथक् पृथक् प्रबंध है। स्कूलमें पढ़नेवाले ब्रह्मचारियोंसे १०) मासिक और कालिजमें पढ़नेवाले ब्रह्मचारियोंसे १५) मासिक फीस ली जाती है। ज्वालापुरमें फीस बिलकुल नहीं ली जाती और यहाँ पूरी ली जाती है। वहाँ प्रायः साधारण स्थितिके लोगोंके बालक रहते हैं, यहाँ श्रीमामानोंके रहते हैं।

छोटी कक्षासे लेकर ऊँचीकक्षा तक यहाँ पर सब पढ़ाई मातृभाषा हिंदीमें होती है। यहाँका पुस्तकालय बड़ा विशाल है। उसमें प्रत्येक विषयके अच्छे अच्छे ग्रंथोंका संग्रह है। पत्र और पत्रिकायें भी कितनी ही आती हैं।

यहाँका अखाड़ा–व्यायामशाला भी दर्शनीय है। उसमें व्यायामकी कितनी ही उपयोगी चीजें हैं।

जल वायु यहाँका बड़ा स्वच्छ है। गुरूकुलके पीछे गंगा बहती है। यहाँका दृश्य बड़ा ही मनोहारी है। वर्षाऋतुमें यहाँ अवर्णनीय आनंद रहता होगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भोजनशाला, यज्ञशाला तथा स्नानागार यहाँ भी ज्वालापुरके समान उत्तम बने हुए हैं। विशेष बात यहाँ पर यह है कि गुरूकुलको स्थान बहुत मिला हुआ है। स्थानकी अधिकतासे यहाँ पर किसी बातकी त्रुटि नहीं है।

सबसे अच्छी बात जो गुरुकुलमें देखनेमें आई वह वहाँके कार्यकर्ताओं और सेवकोंका प्रेम और शिष्ट व्यवहार है। छोटेसे लेकर बड़े तक सबके सब बड़े ही सभ्य और शिष्ट हैं—प्रेम उनके हृदयोंमें कूटकूट कर भरा हुआ है।

क्या जैनसंस्थायें भी इन संस्थाओंसे कुछ पाठ सीखेंगी ?

दर्शक—
दयाचन्द्र गोयलीय।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सट्टा ।

(व्येंकटेश्वरसे उद्धृत)

सट्टेका 'लक्षण' अनिश्चित है । साधारण भाषामें सट्टेका अर्थ 'बदला' होता है । एक चीजके बदले दूसरी चीजका लेना देना 'सट्टा' या 'सौदा' कहलाता है, परन्तु इस अर्थके सिवाय सट्टेका और सच्चे व्योपारका शब्दोंमें भेद करना बहुत ही कठिन है । प्रत्येक व्योपारमें सट्टेका अंश उपस्थित रहता है एवं बड़े बड़े सट्टे वास्तवमें व्योपार कहलाते हैं । 'जोखम' जैसी सट्टेमें रहती है, वैसी प्रत्येक व्यापारमें भी रहती है । दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ताकी दोनोंमें आवश्यकता है । मालकी आयत और निकास, उपज और खप दोनोंहीमें देखी जाती है और दोनोंहीमें लोग अपनी शक्तिके बाहर काम करने लगते हैं । अतः इनके भेदका वर्णन करना सरल नहीं है, किन्तु व्यवहारमें सट्टे और व्योपारका अन्तर स्पष्ट प्रतीत होता है और सर्व विदित है ।

रेल्वे, तार, मिल इत्यादि उद्यमोंके सञ्चालक कभी सटोरिये नहीं कहलायँगे, परन्तु रुई, अलसी, चाँदी, सन, पाट, शेर इत्यादिको अनापशनाप खरीदने वेचनेवाले एवं केवल लाभ हानिके फर्कका लेनदेन करनेका आभ्यन्तरिक सङ्केत रखनेवाले, तथा कानूनसे बचनेके लिये, इस मतलबसे, मालकी 'डिलीवरी' अर्थात् तैयारी लेनदेन करनेवाले, अतएव इसी मतलबसे, लिखित कबूलियतके बन्धनका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आश्रय लेनेवाले अवश्य सटोरिये हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं। कानूनमें भिन्न भिन्न जजोंकी प्रवृत्ति तथा ज्ञानके अनुसार सट्टा जूआ या व्योपार ठहराया जाता है, इससे सट्टेका खास स्वरूप नहीं जाना जा सकता। कानूनी चिह्न इसका निर्णय करनेमें असमर्थ हैं, परन्तु वास्तवमें हम उस व्यापारको सट्टेके नामसे कलंकित करेंगे, जो बूतेके बेहद बाहर है, जो जूएका स्वरूपविशेष है, जिसमें धनी होते उतना ही समय लगता है जितना कि कंगाल होते लगता है। जिसमें 'चान्स' अर्थात् अकस्मात् और 'भाग्यलक्ष्मी' पर अधिक विश्वास रक्खा जाता है, जिसमें प्रायः सौके सौ टका जोखम रहती है। जो अल्प समय एक वायदेसे दूसरे वायदेतकके लिये क्षण भरमें लिया दिया जाता है, जिसमें निरन्तर त्रास बना रहता है और जिसके करनेवाले संसारके सारे सुखोंको भोगते हुए भी सदा पीडित रहते हैं।

सट्टा विश्वव्यापी है। अमेरिका (न्यूयार्क), इंग्लेण्ड (लिवरपुल) इत्यादि बड़े बड़े देशोंमें सट्टा होता है। अतः यह एक महान् अनिष्ट है, जिसको जड़मूलसे उखाड़ना एक बड़ी भारी समस्या है। अमेरिकाके अर्थशास्त्री, प्रोफेसर टासिग लिखते हैं "सट्टेका जोर इतना किसी देशमें नहीं जितना कि अमेरिकाके युनाइटेड स्टेट्समें है। यहाँ सट्टेके सारे साधन उपस्थित हैं। जैसे कि अनेक भागोंमें विभक्त जङ्गी संस्थाएँ, विश्वव्यापी बाजार, बड़े बड़े सौदे, अतिसाहसी और धनी प्रजा इत्यादि। अतः बहुतेरे अमेरिकन साहूकारोंने सट्टेरूपी जूएको ही व्योपार मान रक्खा है। न्यूयार्कका स्टाक एक्श्चेञ्ज अर्थात् शेरबाजार संसार भरमें धीज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पतीजकी एक अनोखी संस्था है, परन्तु संसार भरमें जूएका सबसे बड़ा नरक भी वही है।"

सट्टेके मुख्य गुण आयात और निकास, उपज और खपकी समतोल रखनेका है, अथार्त् माल बाजारमें आनेसे पहले ही खरीद लिया जाता है और खपसे ज्यादा होनेपर गोदाममें जमा कर लिया जाता है तथा खपसे उपजके कम होने पर जमा किया हुआ माल बेच दिया जाता है। यों करनेसे भावका तारतम्य कम होता है और माल नियमित भावसे बिकता है। दैनिक बाजार और मौसमका बाजार एवं भिन्न भिन्न देशोंका बाजार प्रायः एक रहता है। सट्टेके कारण देश देशका व्यापार बढ़ता है और व्यापारके सम्बन्धसे परस्पर विद्या विचार सभ्यता इत्यादिका बड़ा प्रभाव पड़ता है और देशीय शत्रुता दूर होकर अन्योन्य प्रेमभाव उत्पन्न होता है। किसान लोगोंको एवं मजदूरोंको सट्टेकी चलवलके प्रतापसे सदैव अपने अपने काममें अवकाश नहीं मिलता और बाजारकी चिन्ता किये बिना उन्हें नियमित रोजाना मिलता है, एवं यदि अन्नके कबाले किये हुए होते हैं और माल इकट्ठा हुआ पड़ा होता है, तो दुष्कालके समय प्रजा अन्नके अभावसे पीड़ित नहीं होती। सट्टेमें माल नमूनेसे बिकता है:जिससे सौदा सुगमतासे होता है। ईमानदारी, विश्वास और धीजपतीज बढ़ते हैं, जिससे सदर जाइण्ट स्टाक कोओपरेटिव कम्पनियाँ बेङ्क इत्यादि देशको अतुल लाभ पहुँचानेवाली संस्थाओंका निर्माण किया जा सकता है।

सट्टेके गुणकी अपेक्षा उससे उत्पन्न होते हुएं अनिष्ट अधिक प्रबल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। सट्टा एक प्रकारका व्यसन है। एक बार सट्टेके जालमें फँसा हुआ मनुष्य सही सलामत बाहर नहीं निकल सकता। सट्टेके बन्द होनेसे सटोरियेकी आजीविका नष्ट हो जाती है। इतना ही नहीं किन्तु वह किसी कामका नहीं रहता। सटोरियेका उद्यम, उसके दलालका वास्तवमें देशके लिये उद्यम नहीं माना जाता। इनका परिश्रम देशको फलप्रद नहीं, किन्तु अति हानिकर है। सट्टेमें कतिपय चालाक अनुभवी और साहसी लोगोंके सिवाय प्रायः सारे नुकसान ही हासिल करते हैं। तेजी मन्दीका लेन देन उत्तरोत्तर कईबार हो जाता है। प्रथम बेचनेवाला दूसरेके पाससे कुछ अन्तर रखकर खरीद लेता है एवं दूसरा तीसरेसे, इत्यादि। यों करनेसे प्रत्येक व्यक्तिको लाभ व हानि दोनों होते हैं, किन्तु जब एक बड़ा सटोरिया दिवाला निकाल देता है और दूसरा 'कोर्नर' अर्थात् कबाला करता है तब छोटे, अधबिचले सटोरिये इधरके उधर घसीटे जाते हैं और दो विरोधी वेगोंके बीचमें आकर पीसे जाते हैं। इतना ही नही किन्तु देशकी आर्थिक व्यवस्थाको बिगाड़ देते हैं और उपद्रव फैलाते हैं। धनी क्षणमें निर्धन बनते हैं, देशका व्यापार अस्तव्यस्त हो जाता है और देशकी अवस्था अस्थायी बन जाती है। सट्टा आलस्यको उत्तेजित करता है। प्रामाणिक और उद्यमी पुरुषोंके चित्तपर विक्षेप डालता है। ये लोग अपने व्यवसायका परित्याग कर सटोरियोंकी देखादेखी शीघ्रतया धनी बननेकी दुराशामें अपना सर्वस्व खो देते हैं और देशमें चौतरफा आपत्तिका प्रसार हो जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदि ये कुशाग्रबुद्धि, चालाक, साहसी, वणिक महाजन अपने इस व्यर्थ परिश्रम द्वारा मुफ्तका असीम धन प्राप्त करनेकी तृष्णाका त्याग कर अपने देशकी सुप्त कारीगरीको जागृत करें अर्थात् इतर बड़े बड़े व्यवसायोंको हाथमें लेकर अपनी तीव्र बुद्धिके खर्चसे स्वार्थ और परमार्थ दोनों सम्पादन करनेका प्रयत्न करें तो क्या ही अच्छा हो।

सट्टेके दुर्गुण स्पष्ट हैं, किन्तु राज्यके शासनसे उसे रोकना अतीव कठिन है। साधारण विचार सुधरनेसे बाहरी सट्टा कम होगा किन्तु विचार, सुधारनेके प्रयत्न करनेसे सुधरेंगे और व्यापार-सम्बन्धी सुधार इन विषयोंपर तर्क वितर्क अर्थात् चर्चा करनेसे शुद्ध होंगे। प्रोफेसर जेवंसने लिखा है—"सृष्टिभरमें मनुष्यके समान कोई वस्तु नहीं है और मनुष्यमें तर्कके समान दूसरा कोई गुण नहीं।" इसलिये इस तर्कशक्तिको बढ़ाइये और ऐसी चर्चा करनेके स्थानोंकी योजना कीजिये। हमारे मारवाड़ी भाइयोंमें विशेषकर ऐसी संस्थाओंकी बड़ी आवश्यकता है। यह उनके सौभाग्यका चिह्न है कि बम्बईमें 'मारवाड़ीसम्मेलन' के अधिपतित्वमें प्रति रविवारको ऐसी चर्चा विषयक (डिबेटिङ्ग) अधिवेशन होते हैं, जिसमें गम्भीर विषय उठाये जाते हैं। ऐसी संस्थायें स्थान स्थान पर होनी चाहिये।

माधवप्रसाद शर्मा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इतिहास--प्रसङ्ग ।

(२०)

जम्बुस्वामिका समाधिस्थान ।

मिस्टर बी. लेविस राइस साहबने अपनी 'इन्स्क्रिप्शन्स ऐट श्रवणबेलगोला, नामक पुस्तककी भूमिकामें, 'राजावलीकथे' के आधारपर, लिखा है कि—**गोवर्धन** महामुनि, विष्णु, नन्दिमित्र और अपराजित नामके श्रुतकेवलियोंके संग, और पांचसौ शिष्योंके साथ, **जम्बुस्वामिके** समाधिस्थानकी बन्दना करनेके लिए **कोटिकपुर** पधारे थे (had come to kotikapura in order to do reverence at the tomb of Jambuswami) इससे अन्तिम केवली **श्रीजम्बुस्वामि**का समाधि-स्थान 'कोटिकपुर' नामके नगरमें जान पड़ता है। कोटिकपुरको, राइस साहबने, उसी कथाके आधार पर उक्त भूमिकामें, और **रत्ननन्दि** नामके आचार्यने, अपने 'भद्रबाहुचरित्रमें, पुण्ड्रवर्धन देशके अन्तर्गत बतलाया है। और पुण्ड्रवर्धनको जनरल कनिंघमने, बंगाल देशके अन्तर्गत 'बेगरा' के उत्तरकी ओर, 'महास्थान' प्रगट किया है।[१] परन्तु सूरतसे प्रकाशित 'जम्बूस्वामीचरित्र' में जम्बुस्वामिकी निर्वाण भूमि 'मथुरा'

---

१ देखो Arch. Surv. Rep. XV, V., 104 and 110.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नगरीको लिखा है। मथुरामें जो जम्बुस्वामिका मेला होता है उसके विज्ञापनादिकोंमें भी ऐसा ही प्रगट किया जाता है। और सकलकीर्ति आचार्यके शिष्य **जिनदास** ब्रह्मचारीने अपने बनाये हुए जम्बुस्वामिचरित्रमें लिखा है कि श्रीजम्बुस्वामि महाराज '**विपुलाचल**' पर्वतसे मोक्ष गये हैं। अतः विद्वानोंको इस बातका निश्चय करना चाहिए कि वास्तवमें जम्बुस्वामिका समाधिस्थान कहाँपर है।

(२१)

'शतक' ग्रन्थ।

बहुतसे ग्रंथ 'शतक' नामसे प्रसिद्ध हैं। जैसे नीतिशतक, वैराग्यशतक, जैनशतक, जिनशतक और समाधिशतकादि। ग्रंथोंके सम्बंधमें 'शतक' शब्दका अर्थ 'सौपद्योंका समूह' (A collection of one hundred stanzas) होता है। अर्थात् जिस ग्रंथमें एक शत (सौ) पद्योंका समूह हो उसे 'शतक' कहते हैं। नीतिशतकका अर्थ है, नीतिविषयक सौ पद्योंका समूह। इसी प्रकारसे वैराग्यशतकादिकका अर्थ भी जानना। शतक शब्दके इस अर्थसे उपर्युक्त नीतिशतकादि प्रत्येक ग्रंथमें केवल सौ सौ पद्य होने चाहिएँ। परन्तु ग्रंथोंके देखनेसे मालूम होता है कि भर्तृहरिकृत **नीतिशतक**में ११०, **वैराग्यशतक**में ११६, भूधरदासकृत **जैनशतक**में १०७, स्वामि समन्तभद्राचार्यविरचित **जिनशतक**में ११६ और श्रीपूज्यपादाचार्यके **समाधिशतक**में १०५ पद्योंका समूह है। यह क्यों? इसका यथार्थ उत्तर अभीतक हमारी समझमें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नहीं आया। संभव है कि इन ग्रंथोंमें पीछेसे कुछ क्षेपक श्लोक मिल गये हों और उनसे पद्योंकी यह संख्यावद्धि हुई हो। विद्वानोंको इस विषयका शीघ्र निर्णय करना चाहिए और यदि क्षेपकोंके मिलनेसे यह संख्या वद्धि हुई हो तो उन्हें मालूम करनेका यत्न भी करना चाहिए। *

(२२)

पार्श्वनाथचरितका निर्माणकाल।

श्रीवादिराज मुनिका बनाया हुआ 'पार्श्वनाथचरित' नामका एक संस्कृत ग्रंथ है। श्रीयुत टी. एस्. कुप्पूस्वामी शास्त्रीने, यशोधर-चरितकी भूमिकामें, लिखा है कि यह ग्रंथ (पार्श्वनाथचरित) शक संवत् ९४८ में बनकर पूर्ण हुआ है। तदनुसार दूसरे विद्वानोंने भी, विद्वद्रत्नमालादिमें, उसी शक संवत् ९४८ का उल्लेख किया है। शास्त्रीजीने इस संवत्की प्रमाणतामें स्वयं पार्श्वनाथचरितकी प्रशस्तिका निम्न वाक्य उद्धृत किया है:—

'शाकाब्दे नगवार्धिरन्ध्रगणने संवत्सरे क्रोधने।
मासे कार्तिकनाम्नि बुद्धिमहिते शुद्धे तृतीया दिने॥
सिंहे पाति जयादिके वसुमतीं जैनी कथेयं मया।
निष्पत्तिं गमिता सती भवतु वः कल्याणनिष्पत्तये॥'

---

* इसका भी नियम है कि शतकमें सौसे ऊपर अधिकसे अधिक कितने पद्य हो सकते हैं। शतक ही क्यों पञ्चाशत् (पचासा), पञ्चविंशातिका (पच्चीसी), और अष्टक आदिके लिए भी नियम हैं। इस समय स्मरण नहीं परन्तु किसी ग्रन्थमें हमने यह नियम पढ़ा है। सौसे अधिक होनेपर क्षेपक आदिकी कल्पना ठीक नहीं।

—सम्पादक।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस वाक्यमें संवत्का नाम ' **क्रोधन** ' दिया है, जो ६० संवत्सरोंमेंसे ५९ वें नम्बरका संवत् है । ज्योतिषशास्त्रानुसार शक संवत्में बारह जोड़कर साठका भाग देनेसे जो शेष रहे उससे क्रमशः प्रभवादि संवतोंका निश्चय किया जाता है । इस हिसाबसे शक संवत् ९४८ का नाम ' क्रोधन ' नहीं हो सकता । तब ठीक संवत् कौनसा होना चाहिए, यह जाननेकी ज़रूरत है । मेरी रायमें पार्श्वनाथचरितकी समाप्तिका यथार्थ शक संवत् ९४७ है । ' नग ' शब्दसे सातकी संख्याका ग्रहण होना चाहिए, आठका नहीं । श्रीयुत वामन शिवराम आपटेने भी, अपने संस्कृत-इंग्लिशकोशमें, ' नग ' का अर्थ The number seven, अर्थात् संख्या सात, दिया है ।

(२३)

वादिचन्द्रभट्टारक और यशोधरचरित ।

ज्ञानसूर्योदयनाटकके कर्ता वादिचंद्र भट्टारकने एक ' यशोधरचरित' भी बनाया है । यह चरित ज्ञानसूर्योदयनाटकके बाद रचा गया है । ज्ञानसूर्योदय नाटक सवंत् १६४८ में, मधूक (महुआ) नगरमें, बनाकर समाप्त किया गया है और इस चरितकी परिसमाप्ति, वादिचंद्रने, अंकलेश्वर ग्राममें रहकर, संवत् १६५७ में की है । जैसा कि इस चरितके अन्तिम दो पद्योंसे प्रगट है:—

तत्पट्टविशदख्यातिर्वादिवृंदमतल्लिका ।
कथामेनां दयासिद्धै वादिचंद्रो व्यरीरचत् ॥ ८० ॥
अंकलेश्वरसुग्रामे श्रीचिन्तामणिमंदिरे ।
सप्तपंचरसाब्जाङ्के वर्षेऽकारि सुशास्त्रकम् ॥ ८१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस चरितके आरंभमें लिखा है कि श्रीसोमदेव और वादिराजसूरिने जो यशोधरचरित बनाये हैं वे अति कठिन हैं—बालकोपयोगी नहीं हैं, इस लिए यह ग्रंथ बालकोंके—मंदबुद्धियोंके—हितार्थ रचा जाता है।

जिस प्रतिपरसे यह नोट लिखा गया है वह सवंत् १६७२ की अर्थात् ग्रंथकी रचनासे केवल ३६ वर्ष बादकी लिखी हुई है और प्रायः शुद्ध है। इस प्रतिसे यह भी मालूम होता है कि वादिचंद्रके पट्टपर महीचंद्र भट्टारक बैठे हैं और उन्हींको यह प्रति कराकर एक स्त्रीद्वारा समर्पित की गई है।

समाज सेवक—

जुगलकिशोर मुख्तार।

नोट—इसके आगेके नोट सम्पादकके लिखे हुए हैं:—

(२४)

सोमदेवके शिष्य वादिराज और वादीभसिंह।

यशस्तिलकचम्पूके कर्त्ता सोमदेवसूरि बहुत बड़े विद्वान् हो गये हैं। उन्होंने यह ग्रन्थ शकसंवत् ८८१ में बनाया है। वे सकलतार्किकचक्रचूडामणि नेमिदेवके शिष्य थे। यशस्तिलक निर्णय-सागर प्रेसकी काव्यमालामें श्रुतसागरसूरिकृत टीकासहित छप गया है। दूसरे आश्वासनमें पृथक्त्वानुप्रेक्षाकी टीकामें श्रुतसागर-सूरिने वादिराज महाकविका एक श्लोक उद्धृत किया है:—

कर्मणाकवलिता जनिता जातः पुरान्तरजनङ्गमवाटे।
कर्मकोद्रवरसेन हि मत्तः किं किमेत्यशुभधाम न जीवः॥

और इसके बाद ही लिखा है—“ स वादिराजोऽपि श्रीसोमदेवाचार्यस्य शिष्यः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'वादीभसिंहोऽपि मदीयशिष्यः
श्रीवादिराजोऽपि मदीयशिष्यः'

इत्युक्तत्वाच्च।" इससे मालूम होता है कि वादिराज और वादीभसिंह दोनों महाकवि सोमदेवके शिष्य थे; परन्तु टीकाकार महाशयने यह नहीं लिखा कि उपर्युक्त श्लोकार्ध किस ग्रन्थका है। वादिराज अपनेको मतिसागर मुनिके (पार्श्वकाव्यमें) और वादीभसिंह (गद्यचिन्तामणिमें) अपनेको पुष्पषेण मुनिके शिष्य बतलाते हैं। इसके सिवाय वादिराजने पार्श्वचरितं शकसंवत ९४७ में समाप्त किया है जब कि यशस्तिलकको बने हुए ६६ वर्ष बीत चुके थे और वह उनकी प्रौढ़ अवस्थाकी रचना जान पड़ती है। वादीभसिंहके गुरु पुष्पषेण थे और मल्लिषेणप्रशस्तिसे मालूम होता है कि वे (पुष्पषेण) अकलंकदेवके गुरुभाई थे। अष्टसहस्रीकी उत्थानिकामें 'वादीभसिंहेनोपलालिता आप्तमीमांसा' लिखा है। इससे वादीभसिंह अकलंकदेवके समकालीन अर्थात् शक संवत् ७७२ के लगभगके विद्वान् ठहरते हैं जो यशस्तिलक कर्त्ताके शिष्य नहीं हो सकते। इन सब कारणोंसे श्रुतसागरसूरिके उक्त कथनमें शङ्का होती है।

(२५)

तत्त्वार्थसूत्रका मङ्गलाचरण।

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये॥

इस प्रसिद्ध मंगलाचरणको कोई सर्वार्थसिद्धि टीकाका कोई गन्धहस्तिमहाभाष्यका और कोई राजवार्तिक श्लोकवार्तिकादिका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहते हैं; परन्तु वास्तवमें यह मूल सूत्रकार तत्त्वार्थशास्त्रके कर्ता उमास्वामीका रचा हुआ है ।

श्रीमत्तत्त्वार्थशास्त्राद्भुतसलिलनिधेरिद्धरत्नोद्भवस्य,
प्रोत्थानारम्भकाले सकलमलभिदे शास्त्रकारैः कृतं यत् ,
स्तोत्रं तीर्थोपमानं प्रथितपृथुपथं स्वामिमीमांसितं तत् ।
विद्यानन्दैः स्वशक्त्या कथमपि कथितं सत्यवाक्यार्थसिद्ध्यै॥
इति तत्त्वार्थशास्त्रादौ मुनीन्द्रस्तोत्रगोचरा ।
प्रणीताप्तपरीक्षेयं कुविवादनिवृत्तये ॥ १२४ ॥

आप्तपरीक्षाके अन्तके इन दो श्लोकोंसे इस विषयमें ज़रा भी शङ्का नहीं रहती है । इनका सारांश यह है कि:—तत्त्वार्थसूत्रके प्रारंभमें शास्त्र कारने अर्थात् भगवान् उमास्वामीने जो ' मोक्षमार्गस्य नेतारं ' आदि स्तोत्र बनाया है और स्वामी समन्तभद्रने जिसकी मीमांसा (आप्तमीमांसा) की है, मुझ विद्यानन्दने आप्तकी सिद्धिके लिए उसीका यह व्याख्यान किया ॥ १२३ ॥ इस तरह यह तत्त्वार्थसूत्रकी आदिके मंगलाचरणरूप स्तोत्रका विचार करनेवाली आप्तपरीक्षा रचीं गई ।

आप्तपरीक्षाके प्रारंभके श्लोकोंसे भी यही बात मालूम होती है:—

श्रेयोमार्गस्य संसिद्धिः प्रसादात्परमेष्ठिनः ।
इत्याहुस्तद्गुणस्तोत्रं शास्त्रादौ मुनिपुङ्गवाः ॥
मोक्षमार्गस्य नेतारं........................ ।
.... ॥

अर्थात् परमेष्ठीके प्रसादसे मोक्षमार्गकी प्राप्ति होती है, अतएव तत्त्वार्थशास्त्रके आदिमें मुनिपुङ्गव उमास्वामि ' मोक्षमार्गस्य नेतारं ' आदि उनके गुणोंका स्तोत्र करते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्पूर्ण आप्तपरीक्षा ग्रन्थमें इसी मंगलाचरणकी विस्तारपूर्वक व्याख्या की गई है ।

(२६)

आचार्य सिद्धसेन ।

आदिपुराण, हरिवंपुराण आदिके कर्त्ताओंने एक सिद्धसेन नामक महाकवि और नैयायिकका स्तवन किया है; परन्तु न तो इनका कोई ग्रन्थ ही प्राप्य है और न यह मालूम है कि ये कब हुए हैं । श्वेताम्बर सम्प्रदायमें भी एक 'सिद्धसेन' नामके महान् विद्वान् हो गये हैं जो 'सिद्धसेनदिवाकर' कहलाते हैं और जो विक्रमकी सभाके 'क्षपणक' नामसे प्रसिद्ध रत्न थे । अभीतक हमारा यह खयाल था कि उमास्वामीके समान सिद्धसेन भी एक ही होंगे और उन्हें दोनों सम्प्रदायवाले अपना अपना मानते होंगे; परन्तु अब हमें इस विषयमें सन्देह होने लगा है । श्वेताम्बरसम्प्रदायमें हरिभद्र नामके एक प्रतिष्ठित आचार्य हो गये हैं । उनका स्वर्गवास विक्रमसंक्त् ९८९ या ९७९ में हुआ था । उनके बनाये हुए बहुतसे ग्रन्थ हैं जिनमें एक धर्मबिन्दु भी है । इस ग्रन्थके चौथे अध्यायमें दीक्षा लेने योग्य मनुष्यका वर्णन करतेहुए ग्रन्थकर्त्ताने वाल्मीकि, व्यास, सम्राट्, वायु, नारद, वसु, क्षीरकदम्बक, बृहस्पति, विश्व, और सिद्धसेन इन दश आचार्योंके मत दिये हैं और उनको ठीक न बतलाकर अन्तमें अपना मत दिया है । सिद्धसेनका मत सबसे पीछे दिया है और उसके बाद अपना दिया है । इससे मालूम होता है कि ये सिद्धसेनाचार्य हरिभद्रके पहले हो गये हैं और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्भवतः उनके सम्प्रदायके नहीं किन्तु दिगंबर संप्रदायके थे। दीक्षाके विषयमें सिद्धसेनका मत यह है कि ' बुद्धिमान् पुरुषोंको द्रव्य, क्षेत्र, काल भावका विचार करके जो योग्य मालूम हो वह करना चाहिए । "

जैनजातियोंमें पारस्परिक विवाह ।

मनुष्यजातिरेकैव जातिनामोदयोद्भवा ।
वृत्तिभेदा हि तद्भेदाच्चातुर्विध्यमिहाश्नुते ॥ ४५ ॥

—आदिपुराण, पर्व ३८ ।

जैनसमाजके समक्ष यह प्रश्न उपस्थित हो चुका है कि, जैनधर्मकी माननेवाली जो अनेक जैनजातियाँ हैं उनमें परस्पर विवाहसम्बन्ध या बेटीव्यवहार होना चाहिए अथवा नहीं । इस विषयकी चर्चाका प्रारंभ भी हो गया है—एक पक्ष इसे आवश्यक तथा लाभजनक बतलाता है और दूसरा अनावश्यक तथा हानिकारक बतलाता है; परन्तु दोनों ही पक्षोंकी ओरसे अभीतक इस विषयमें ऊहापोहपूर्वक विचार नहीं किया गया है और न सर्वसाधारणको यह समझाया गया है कि इसमें क्या क्या लाभ और क्या क्या हानियाँ हैं । इस लेखमें हम पारस्परिक विवाहोंके बिना जो हानियाँ होती हैं, उनपर विचार करेंगे । आशा है कि, जो सज्जन इस विषयमें हमसे विरुद्ध हैं वे भी अपने विचार विस्तारपूर्वक प्रकाशित करनेकी कृपा दिखलावेंगे ।

सबसे पहले हमें यह देखना चाहिए कि इस विषयमें कोई धार्मिक हानि तो नहीं है । वर्तमानमें जो जैन ग्रन्थ प्राप्य हैं और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिन्हें हम प्रामाणिक मानते हैं, उनमें आज कलकी जातियोंका जिक्र तक नहीं है। जातियाँ पहले थीं भी नहीं। पिछले हज़ार वर्षमें ही इनकी रचना हुई है, ऐसा अनुमान होता है। आदिपुराणमें जाति शब्द कई जगह आया है; परन्तु उस समय इस शब्दका अर्थ वर्तमानकी जातियोंसे भिन्न था:—

पितुरन्वयशुद्धिर्या तत्कुलं परिभाष्यते।
मातुरन्वयशुद्धिस्तु जातिरित्यभिलप्यते॥

—आदि० पर्व ३९, श्लो० ८५।

अर्थात् पिताकी परम्पराकी शुद्धिको कुल और माताकी परम्पराकी शुद्धिको जाति कहते हैं। परन्तु वर्तमानमें जातिका कुछ और ही रूप है। माताकी परम्परा शुद्धिसे उसका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। आजकल जो जातियाँ हैं वे ग्रामों या नगरोंके नामसे, व्यापारधंधोंके सम्बन्धसे, आचारभेदसे, तथा धर्मभेदसे बनी हैं और नई नई बनती भी जाती हैं।

जिन धर्मग्रन्थोंकी इस समय हमें प्राप्ति है वे इस विषयमें बहुत कुछ उदार हैं। उनमें अनुलोमवर्णविवाहकी आज्ञा दी गई है। पहले—जातियोंकी उत्पत्तिके पहले—भारतवर्षमें चार वर्ण थे—ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र। उनमें अनुलोम और प्रतिलोम विवाह होते थे जिनमेंसे अनुलोमविवाह सर्वमान्य थे। यशस्तिलक महाशास्त्रके कर्त्ता सोमदेवसूरि अपने नीतिवाक्यामृतके विवाहसमुद्देशमें कहते हैं:— "**आनुलोम्येन चतुस्त्रिद्विवर्णकन्याभाजना ब्राह्मणक्षत्रियविशः**।" अर्थात् ब्राह्मण, ब्राह्मण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्षत्रिय वैश्य और शूद्रकी; क्षत्रिय, क्षत्रिय वैश्य और शूद्रकी; और वैश्य वैश्य और शूद्र वर्णकी कन्याओंको ले सकता है । आदिपुराणमें भी इस अनुलोमविवाहका उल्लेख है । इससे हम विचार कर सकते हैं कि जब हमारे धर्मशास्त्र वैश्योंको शूद्रतककी कन्या लेनेमें पाप नहीं बतलाते हैं तब खण्डेलवालको अग्रवालकी और परवारको पोरबाड़की कन्या लेनेमें कैसे पाप बतला सकते हैं ?

हमारे कथाग्रन्थोंमें इस तरहके विवाहसम्बन्धोंका उल्लेख भी मिलता है । चक्रवर्ती म्लेच्छोंकी कन्यायें लाते थे । यह अभी २२०० वर्षकी ही बात है कि चन्द्रगुप्त मौर्यने सेल्यूकसकी बेटीके साथ विवाह किया था । जरत्कुमारकी माता भिल्लनी थी । राजा उपश्रेणिकने एक भीलकी कन्याके साथ शादी की थी । उनके पुत्र श्रेणिक नन्दिश्री नामकी रानी एक वैश्यसेठकी कन्या थी । पद्मपुराण और हरिवंशपुराणमें भी ऐसी कई कथायें हैं जिनसे मालूम होता है कि पहले असवर्णविवाह खूब होते थे और वे किसी प्रकार निन्द्य नहीं समझे जाते थे । गरज यह कि धर्मशास्त्रोंकी आज्ञानुसार अनुलोमवर्णविवाहमें कोई दोष नहीं है और जब असवर्ण विवाहमें दोष नहीं है तब एक वर्णकी ही बनी हुई अनेक जातियोंके पारस्परिक विवाहसम्बन्धमें तो दोषकी कल्पना भी नहीं हो सकती ।

धार्मिक बुद्धिसे विचार करनेमें भी इस प्रकारके सम्बन्धमें कोई दोष नहीं जान पड़ता । जिनके साथ हमारा भोजनव्यवहार होता है, जिनके आचार-व्यवहार-विचारादि हमी जैसे हैं और जो एक ही धर्म और देवकी उपासना करते हैं, उनमें बेटी-व्यवहार होने लग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नेसे हम तो नहीं सोच सकते कि धर्मके कौनसे अंगका घात हो जायगा और कौनसा पातक लग जायगा।

कुछ लोग यह आपत्ति उपस्थित करते हैं कि जब हमारे पूर्व-पुरुषोंने जातिसंस्थाको आश्रय दिया है और सैकड़ों वर्षोंसे यह चली आ रही है, तब हम इसके नियमोंका उल्लंघन क्यों करें? इसके उत्तरमें हमारा निवेदन यह है कि पूर्व पुरुषोंकी चलाई होनेसे ही जातिसंस्था अच्छी नहीं हो सकती है—हमें उसके हानि-लाभोंपर विचार करना चाहिए। बापदादाओंका खुदवाया हुआ होनेके कारण ही खारे कुँआका पानी मीठा कहके नहीं पिया जा सकता। और आदिपुराण आदिके रचयिता भी तो हमारे पूर्व पुरुष थे, यदि पूर्वपुरुषोंकी ही बात मानना है तो फिर उनके अनुलोम-विवाहके नियमको हम क्यों नहीं मानते? और इस विषयका दावा कैसे किया जा सकता है कि पूर्वपुरुष भूल नहीं करते? आगे होनेवाली सन्तानके हम भी तो पूर्वपुरुष हैं। क्या हम कह सकते हैं कि हमसे भूलें नहीं होती हैं? संभव है कि हमारे पूर्वपुरुष भी अनेक अच्छी बातोंके साथ यह एक भूल कर गये हों। अथवा अपने देशकालादिकी परिस्थितियोंके अनुसार उस समय उन्होंने इस संस्थाके जारी करनेमें लाभ सोचा हो और शायद उस समय लाभ हुआ भी हो; परन्तु आजकलकी परिस्थितियाँ ऐसी नहीं हैं कि हमारी जातिसंस्थाके नियम इतने कड़े रहें कि हम परस्परविवाह सम्बन्ध न कर सकें। ऐसी दशामें हम क्यों लकीरके फकीर बने रहें? हमारे पूर्वपुरुषोंकी यह आज्ञा भी तो है कि प्रत्येक कार्य देशकालकी योग्यताके अनुसार करना चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पारस्परिक विवाहसन्बन्ध न होनेसे क्या हानियाँ हो रही हैं, यह बतलानेके पहले हम यह कह देना चाहते हैं कि हम जाति-भेदको नहीं उठाना चाहते । जैनोंमें इस समय डेड़सौ या दोसौ जितनी जातियाँ हैं वे सब बनी रहें—उनके बने रहनेसे हमारी कोई हानि नहीं है । हम सिर्फ़ यह चाहते हैं कि सब जातियेंमें परस्पर बेटीव्यवहार होने लगे और इस तरह विवाहसम्बन्धका क्षेत्र विस्तृत हो जाय ।

१ **जातियोंका क्षय**—पारस्परिक विवाहसम्बन्ध न होनेसे छोटी छोटी जातियोंका क्षय होता जाता है। ऐसी कई जातियोंका क्षय हो चुका है—उनका अब केवल नाम मात्र सुन पड़ता है और कई-का हो रहा है । ऐसी जातियोंमें जिनमें सौ सौ पचास पचास ही घर होते हैं, विवाहका क्षेत्र बहुत ही संकुचित हो जाता है । एक तो घर ही थोड़े और फिर उनमें भी एक गोत्रके, तथा मामा-फुआ-मौसी आदिके सम्बन्धके घर; ऐसी अवस्थामें वरको कन्यायें और कन्या-ओंको वर मिलना कितना कठिन होना होगा, इसका अनुमान सब ही कर सकते हैं । इसका फल यह होता है बहुतसे लोग ब्याह किये बिना ही—सन्तानोत्पादन किये बिना ही मर जाते हैं, जो विवाह होते हैं वे बेजोड़ होते हैं इस कारण सन्तान दीर्घजीवी नहीं होती, कमजोर बालकोंके साथ ब्याहे जानेसे लड़कियाँ विधवा अधिक होती हैं और इस तरह थोड़े ही समयमें ऐसे जातियोंका नामशेष हो जाता है । सन् १९११ की मनुष्यगणनाकी रिपोर्टसे मालूम होता है कि जैनोंकी ऐसी ५९ जातियाँ हैं जिनकी जनसंख्या १०० से भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कम है ! १७ जातियाँ ऐसी हैं जो बराबर घट रही हैं और कुछ दिनोंमें समाप्त हो जायँगी ! १९०१ में दिसवाल जातिकी जन-संख्या ९७१ थी, जो १९११ में घटकर सिर्फ ३२९ रह गई ! बरारमें एक ' कुकेकरी ' नामकी जाति थी जिसमें अब एक भी पुरुष या स्त्री जीवित नहीं है। यदि विवाहका क्षेत्र बढ़ जायगा तो इन छोटी जातियोंका क्षय होना बन्द हो जायगा—इनमें जो लोग कुँआरे ही मर जाते हैं वे न मरने पावेंगे। इस विषयमें यह शंका हो सकती है " यदि इन अल्पसंख्यक जातियोंके पुरुष दूसरी जातिकी कन्यायें ब्याह लेंगे, तो उन जातियोंमें कन्याओंकी कमी हो जायगी और कुँआरोंकी संख्या बढ़ जायगी। " इसका समाधान यह है कि यद्यपि समूची जैन जातिमें स्त्रियोंकी संख्या पुरुषोंकी अपेक्षा कम है तो भी बहुत जातियाँ ऐसी हैं जिनमें विवाहयोग्य पुरुषोंकी अपेक्षा विवाहयोग्य कन्याओंकी संख्या अधिक है, अथवा अल्प संख्याके कारण गोत्रादि नहीं मिलते हैं इससे स्त्रिया भी कुँआरी रह जाती हैं और पुरुष भी कुँआरे रह जाते हैं। १९११ की मनुष्यगणनासे मालूम होता है कि जैनोंमें २९ वर्षसे अधिक अवस्थाकी २०३२ स्त्रियाँ कुँआरी हैं और १९ वर्षसे अधिक उम्रकी कुमारियोंकी संख्या तो छह हजारसे भी अधिक है ! कुछ समय पहले जैनमित्रमें एक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसमें बतलाया था कि अग्रवाल जातिमें ऐसी सैकड़ों जवान और प्रौढ स्त्रियाँ हैं जिनको विवाहका सुख नसीब नहीं हुआ। सो यदि सब जातियोंमें बेटीव्यवहार होने लगेगा, तो इस प्रकारकी कुमारियोंकी संख्या बिलकुल न रहेगी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस विषयमें एक शंका यह की जाती है कि पारस्परिक विवाह-सम्बन्ध जारी होनेसे पहले पहल उन जातियोंको बहुत हानि उठानी पड़ेगी जिनकी संख्या थोड़ी है और जो निर्धन हैं। क्योंकि उन धनिक जातियोंके लोग जिनमें कन्यायें कम हैं छोटी जातियोंपर टूट पड़ेंगे और उनकी सारी कन्याओंको हथया लेंगे। इसका फल यह होगा कि छोटी जातियोंके लड़के कुँआरे रह जायँगे और निर्धन होनेके कारण अन्य जातिके लोग उन्हें कन्यायें देंगे नहीं। परन्तु हमारी समझमें यह शंका निरर्थक है। कारण एक तो ऐसी जाति शायद ही कोई हो जिसमें निर्धन ही निर्धन हों धनी कोई न हो; सभी जातियोंमें धनी और निर्धन पाये जाते हैं, दूसरे जिन जातियोंमें धनी अधिक हैं उनमें निर्धन भी बहुत हैं जो दूसरी जातिके निर्धनोंको अपनी लड़कियाँ खुशीसे देनेका तैयार हो जायँगे। तीसरे धनी प्रायः धनियोंके ही साथ सम्बन्ध करते हैं; गरीबोंके साथ तो उस समय सम्बन्ध करते हैं, जब उम्र बहुत अधिक हो जाती है। सो ऐसे लोगोंको तो रुपयोंके जोरसे कहीं न कहीं लड़कियाँ मिल ही जायँगी, चाहे वे जातिमें मिलें या दूसरी जातियोंमें। यदि वे दूसरी जातियोंकी कन्यायें ले आयँगे तो उनकी जातिकी कन्यायें औरोंके लिए बची रहेंगी। बात यह है कि इस प्रश्नका विचार समग्र जैन-समाजके हानि लाभपर दृष्टि रखकर करना चाहिए। तमाम जैन-जातियोंमें जितनी कन्यायें हैं यदि उन सबका यथोचित सम्बन्ध हो जाय, किसीको कुँआरी न रहना पड़े—और विवाहक्षेत्र बढ़ जानेसे यह निस्सन्देह है कि लड़कियाँ कुँआरी न रहेंगीं—तो समझना होगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कि पारस्परिक विवाहसम्बन्ध लाभकारी है। यदि इससे किसी एक जातिको कुछ हानि भी हो—और आरंभमें ऐसा होना कई अंशोंमें संभव भी है—तो सारे जैनसमाजके लाभके ख़याल़से उसको दर गुज़र करना होगा।

२ कन्याविक्रय और वरविक्रय—जैनोंकी बहुतसी जातियोंमें कन्याविक्रय होता है और बहुतसी जातियोंमें वरविक्रय होता है। इसके लिए बहुत उपदेश दिये जाते हैं, पाप आदिके डर बतलाये जाते हैं, पंचायतियोंमें नियम बनाये जाते हैं, पर फल कुछ नहीं होता। हो भी नहीं सकता। क्योंकि इसका कारण कुछ और ही है। जिन जातियोंमें लड़कियोंकी संख्या कम है उनमें कन्यायें और जिनमें लड़कोंकी संख्या कम है उनमें वर विकते हैं। कोई अपने लड़के लड़कियोंको ब्रह्मचारी तो रखना नहीं चाहता है, तब उनके ब्याहके लिए औरोंके साथ प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है—करनी ही चाहिए; क्योंकि चीज़ कम और ग्राहक ज्यादा। सब ही यह चाहते हैं कि रुपया चाहे जितना लग जावे, पर मेरा लड़का या लड़की अविवाहित न रहे। उधर लड़की या लड़कावाला जब देखता है कि ग्राहक अधिक हैं तब वह अधिक रुपया कमानेकी इच्छा करने लगता है। यदि विवाहका क्षेत्र बढ़ जायगा—सब जातियोंमें सम्बन्ध होने लगेगा, तो कन्याविक्रय और वरविक्रय ये दोनों दुष्प्रथायें बहुत कुछ कम हो जायँगी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुछ लोगोंका यह ख़याल है कि सब जातियोंमें बेटीव्यवहार होने लगनेसे कन्याविक्रय बढ़ जायगा। ऐसे लोग अपने विचारकी पुष्टिमें यह युक्ति देते हैं कि जो लोग अपनी लड़कियोंको बेचते हैं, उनके लिए बिक्रीका क्षेत्र बढ़ जायगा और इस कारण वे जिस जातिमें अधिक धन देनेवाले मिलेंगे उसी जातिमें अपना काम बनानेकी कोशीश करेंगे; परन्तु यह युक्ति इस प्रश्नके एक ही ओर दृष्टि डालकर की जाती है—यह नहीं सोचा जाता कि जब बेचनेवालेके लिए बिक्रीका क्षेत्र बढ़ जाता है तब ख़रीददारोंके लिए भी तो ख़रीद करनेका क्षेत्र छोटा नहीं रहता है। जो रुपये देकर ब्याह करना चाहेंगे, उनके लिए फिर लड़कियाँ भी तो बहुत मिलने लगेंगी—वे बेचनेवालोंके बढते हुए लोभमें सहायक क्यों होंगे?

३ **बाल्यविवाह**—विवाहका क्षेत्रका संकुचित होनेसे लोगोंको अपने लड़के-लड़कियोंके ब्याहकी चिन्ता बहुत अधिक हो गई है और इस कारण वे जब योग—जोग जुड़ता है तब ही विवाह कर डालते हैं—उम्र आदिकी ओर देखते भी नहीं। यदि वे उम्रका विचार करते रहें तो उन्हें वर कन्याओंका मिलना ही कठिन हो जाय। अल्पजनसंख्यावाली जातियोंमें बाल्यविवाहका ज़ोर औरोंकी अपेक्षा इसी कारण अधिक देखा जाता है। विवाहका क्षेत्र विस्तृत होनेसे बाल्यविवाह अवश्य ही बहुत कम हो जायगा। यहाँ यह करनेकी ज़रूरत नहीं मालूम होती कि बाल्यविवाहके कारण हमारे समाजको शारीरिक—मानसिक निर्बलता, गार्हस्थ्य सुखकी हानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आदि कितनी हानियाँ उठानी पड़ी हैं। इन बातोंको अब सभी लोग जानने लगे हैं।

४ आँटा–साँटा—कन्याव्यवहारके क्षेत्रके संकीर्ण होनेका एक परिणाम आँटासाँटा भी है। यदि कोई अपने लड़केका ब्याह करना चाहता है अर्थात् दूसरेकी लड़की लाना चाहता है तो उसे अपनी या अपने भाई बन्धुओंकी एक लड़की उस लड़कीवालेके लड़केके लिए तैयार करके रखनी पड़ती है। इसी दुष्ट प्रथाका नाम आँटासाँटा है। इससे अपने लड़केके स्वार्थके लिए लड़की चाहे जैसे घरमें झोंक दी जाती है! विवाहका क्षेत्र विस्तृत होनेसे यह दुष्ट रिवाज़ जड़ मूलसे उखाड़ा जा सकता है अब भी यह उन्हीं जातियोंमें ज़ारी है जिनकी जनसंख्या बहुत थोड़ी है।

५ अनमेलविवाह—वर छोटा कन्या बड़ी, कन्या छोटी वर बड़ा, वर मूर्ख और कन्या विदुषी, वर विद्वान् और कन्या मूर्ख, वर दुश्चरित्र और कन्या सुशीला आदि तरह तरहके बेजोड़ विवाह होनेका भी एक कारण विवाहक्षेत्रकी संकीर्णता है। जहाँ चुनावका क्षेत्र छोटा होता है वहाँ इस तरहके अनमेलविवाह लाचार होकर करना पड़ते हैं। आजकल जो लोग अपने लड़के और लड़कियोंको ऊँचे दर्जेकी शिक्षा देते हैं, यदि उनकी जाति अल्पसंख्यक है तो उनकी चिन्ताका और शिक्षित लड़के लड़कियोंकी दुर्दशाका कुछ पार ही नहीं रहता। लड़कीको आपने खूब पढ़ाई लिखाई; परन्तु जब ब्याहका वक्त आया तो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जातिमें योग्य शिक्षित वरके न मिलनेसे उसे किसी मूर्खके गले बाँध दी! बस, उसकी ज़िन्दगी ख़राब हो गई। ऊँचे दर्जेकी शिक्षा पाये हुए युवकोंकी भी मिट्टी इसी तरह पलीद होती है। वे या तो किसी अशिक्षिताके गलग्रह बन जानेसे जीवनभर दुखी रहते हैं या केवल इसी कारण–शिक्षिता स्त्रीके प्राप्त करनेकी इच्छासे—आर्य-समाज आदि इतर समाजोंके अनुयायी हो जाते हैं। इन बेजोड़ ब्याहोंके फलसे हमारे गृहस्थाश्रमके सुखका सर्वथा लोप हो रहा है–न स्त्रियाँ सुखी हैं और न पुरुष। यदि विवाहका क्षेत्र विस्तृत हो जायगा तो बहुत लाभ होगा–इच्छित वर और कन्याओंकी प्राप्तिका मार्ग बहुत कुछ सुगम हो जायगा।

६ **दुराचारकी वृद्धि**—जिन जातियोंमें कन्यायें थोड़ी हैं उनमें कुँआरे पुरुष अधिक रहते हैं और जिनमें कन्यायें अधिक हैं उनमें कुँआरी अधिक रहता हैं। इन दोनोंका फल यह होता है कि समाजमें दुराचारकी वृद्धि होती है। बाल्यविवाह, अनमेल-विवाह आदिके कारण भी दुराचारकी वृद्धि होती है और इन सबका मूल, विवाहक्षेत्रकी संकीर्णता है। यह विस्तृत हो जायगा तो जिस दुराचारको लोग प्रकृतिपर विजय न पा सकनेके कारण लाचार होकर करते हैं, वह बहुत कुछ कम होजायगा।

७ **उत्तम सन्तान न होना या निःसन्तान होना**—विवाह-क्षेत्रकी संकीर्णताका सबसे बड़ा भयंकर परिणाम यह हुआ है कि हमारी सन्तान दिन पर दिन दुर्बल और अल्पजीवी होती जाती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक तो बेजोड़ विवाहोंकी, परस्पर प्रेम न रखनेवाले जोड़ोंकी, और बाल्यविवाहोंकी सन्तान यों ही अच्छी नहीं होती और फिर अल्पसंख्यावाली जातियाँ लाचार होकर बहुत ही नजदीकके सम्बन्धमें ब्याह करने लगती हैं। जो जाति जितनी ही छोटी है, उसमें ब्याह शादियाँ उतनी ही नजदीककी होने लगती हैं—बहुत ही निकटका रक्तसम्बन्ध होने लगता है और यह उत्तम और दीर्घजीवी सन्तानके न होनेका अथवा सन्तान ही न होनेका प्रधान कारण है। शरीरशास्त्रके विद्वानोंका मत है कि रक्तका सम्बन्ध जितनी ही दूरका होगा सन्तान उतनी ही अच्छी और बलिष्ठ होगी। हमारे प्राचीन आचार्योंने भी इसी कारण निकट सम्बन्धोंका निषेध किया है। असवर्णविवाहकी पद्धतिका मूल भी यही मालूम होता है। ईसाईयों और मुसलमानोंमें काका-जात भाई बहनोंका ब्याह करदेनेकी पद्धति है। यूरोपके शरीरशास्त्रज्ञ विद्वान् इस प्रथाको बहुत ही हानिकारक बतलाते हैं और इसको रोकनेके लिए आन्दोलन कर रहे हैं। उन्होंने परीक्षायें करके सिद्ध कर दिया है कि निकटसम्बन्धकी सन्तान बहुधा रुग्ण विकलाङ्ग और बुद्धिहीन होती है। यूरोपमें और इस देशमें ऐसे बहुतसे प्रतिष्ठित वंश हैं जो अपने ही जैसे कुछ इनेगिने वंशोंसे ही सम्बन्ध करते हैं। इसका फल यह हुआ है कि उनके सन्तान बहुत कम होती है और जो होती है वह अयोग्य होती है। ईराणकी, 'बाहाई' जातिके लोगोंमें निकट सम्बन्ध करनेकी पद्धति नहीं है, इस कारण उक्त जातिके लोग वहाँकी अन्य समकक्ष जातियोंकी अपेक्षा अधिक बुद्धिवान् और बलवान् होते हैं। ह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोग यदि जैनसमाजकी तमाम जातियोंमें विवाहसम्बन्ध करने लगेंगे, तो यह दिन पर दिन बढ़नेवाला निकट सम्बन्धका हानिकारक प्रचार अवश्य कम हो जायगा।

८ **एकताकी हानि**—यह एक बहुत मोटी बात है कि विवाहसम्बन्धसे पारस्पारिक स्नेहकी और सहानुभूतिकी वृद्धि होती है। जिस जातिके लोगोंके साथ हमारा सम्बन्ध होगा यह संभव नहीं कि उनके साथ हमारी एकता घनिष्ठ न हो। जैनसमाजकी सम्पूर्ण जातियोंके साथ अभी हमारा सिर्फ़ धर्मका सम्बन्ध है, यदि रक्तका सम्बन्ध भी हो जाय, तो प्रेम और सहानुभूति बहुत कुछ बढ़ जाय। हम एकताके एक लम्बे चौड़े सूतमें बँध जायँ और एक दूसरेके सुख दुःखोंका भलाई बुराइयोंका बहुत कुछ अनुभव करने लगें। एक दूसरेकी सहायतासे हमें उन्नति करनेके अवसर भी बहुत मिलने लगें। हम एक विशाल जातिके अंग बन जायँ। अभी तो हम अपनी अपनी ढपली और अपने अपने रागमें ही मस्त हैं। अपनी जातिसे भिन्न जातिकी उन्नति अवनतिका हमें बहुत ही कम ख़याल है।

जो लोग विवाहसम्बन्धसे एकता और पारस्परिक सहानुभूतिकी वृद्धि नहीं मानते हैं उन्हें बादशाह अकबरकी उस कूटनीति पर ध्यान देना चाहिए जिससे उसने राजपूत जैसी उद्दण्ड उद्धत और अजेय जातिको भी विवाह सूत्रमें बाँधकर अपने वशमें कर लिया था और अपने राज्यकी नीवको बहुत ही दृढ बना दिया था। विवाहसम्बन्धके कारण जब राजपूत और मुसलमान जैसी अतिशय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भिन्न जातियोंमें प्रेम और एकताकी वृद्धि हुई–मानसिंह जैसे वीरोंने मुगलसाम्राज्यकी रक्षाके लिए अपना जीवन लगा दिया, तब हमारी एक धर्मकी माननेवाली समीपवर्तिनी जातियोंमें इससे प्रेम और सहानुभूति क्यों न बढ़ेगी ?

ये बहुत ही मोटी मोटी बातें हैं जो हमें बतलाती हैं कि तमाम जैनजातियोंमें बेटी व्यवहार होने लगनेसे बहुत लाभ होगा और हम अनेक हानियोंसे बच जावेंगे। विचार करनेसे इनके सिवाय और भी अनेक बातें मालूम हो सकती हैं। हम आशा करते हैं कि हमारा यह लेख जगह जगह पंचायतियोंमें पढ़ा जायगा और विचारशील सज्जनोंका ध्यान इस विषयके हानिलाभोंकी ओर आकर्षित होगा। यहाँ हम यह भी कह देना चाहते हैं कि अभी यह विषय केवल चर्चाका है–अभी यह आशा नहीं कि लोग इस तरहका विवाह-सम्बन्ध करनेके लिए तैयार हो जायँगे। पहले अच्छी तरह चर्चा हो ले, लोग इसविषयको अच्छी तरह समझ लें, वादाविवाद तर्क वितर्क कर लें, तब हम इसे कार्यमें परिणत देखनेकी आशा करेंगे। पर हमें यह विश्वास अवश्य है कि एक न एक दिन सारा जैनसमाज पारस्परिक विवाहसूत्रमें आबद्ध हुए बिना न रहेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनोंकी राजभक्ति और देशसेवा।

१–अजमेरके गवर्नर डूमराज।

जब मारवाड़के महाराजा विजयसिंहने सन् १७८७ ईस्वीमें अजमेरको पुनः मरहटोंसे जीत लिया तो उन्होंने डूमराज सिंघीको जो ओसवाल जातिके जैन थे अजमेरका गवर्नर नियुक्त किया। मरहटोंने शीघ्र ही अपनी हानियोंकी पूर्ति कर ली और चार सालके पश्चात् फिर मारवाड़ देशपर आक्रमण किया। मेड़ता और पाटनके दो भीषण युद्ध हुए जिनमें मारवाड़ी पददलित कर दिये गये।

इसी बीचमें मरहटोंके सरदार डी. बाइनने अजमेर पर हमला कर दिया और उसको चारों ओरसे घेर लिया। अजमेरके गवर्नर डूमराजने अपनी छोटीसी सेनासे शत्रुका बड़ी वीरतासे सामना किया और उनको आगे बढ़नेसे रोक दिया।

पाटनयुद्धके बुरे परिणामके कारण विजयसिंहने डूमराजको हुक्म दिया कि मरहटोंको अजमेर सौंपकर जोधपुर चले आओ। उस साहसी बीरके लिए यह उत्तम कसौटी थी, क्योंकि न तो वह अपमानके साथ शत्रुको देश देना चाहता था और न वह अपने स्वामीकी आज्ञाका ही उल्लंघन करना चाहता था। इस भयंकर समयमें वह द्विविधामें पड़ गया। अन्तमें उसने निश्चय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर लिया कि शत्रुकी अधीनता स्वीकार करनेसे तो मरना श्रेष्ठ है। वह अपने हाथमें हीरेसे जटित अँगूठी पहने हुए था। उसने हीरेको निकाल कर पीसा और खा गया ! मृत्युशय्यापर लेटे हुए इस बीर योद्धाने चिल्लाकर कहा "जाओ और महाराजसे कहो कि मैंने प्राण त्याग करके ही स्वामीभक्तिका परिचय दिया है। मेरी मृत्यु पर ही मरहटे अजमेरमें प्रवेश कर सकते हैं, पहले नहीं।"

२–मेवाड़के जीवनदाता भामाशाह।

कर्नल टाड साहबका कथन है कि इतिहासमें भामाशाह 'मेवाड़के जीवनदाता'के नामसे प्रसिद्ध हैं। वे ओसवाल जातिके जैन थे। देशभक्ति और देशसेवाके आदर्श नमूने थे। आप जगद्विख्यात लोकमान्य राणा प्रतापसिंहके दीवान थे। इस पदपर आपके घरानेके लोग पीढ़ियोंसे चले आते थे।

जिन लोगोंने इतिहासके पन्ने पल्टे हैं उन्हें ज्ञात होगा कि मुगल सम्राट् अकबरने चित्तौरपर आक्रमण किया था और भारतकेसरी वीर राणाप्रतापसिंहने बड़ी वीरतासे उसकी रक्षा की थी। एकबार राणाप्रतापके कोषमें द्रव्यका अभाव हो गया जिसके कारण वे अत्यन्त क्लेशित और पीड़ित हो रहे थे। उस समय उनकी दशा ऐसी शोचनीय थी कि उन्होंने इस हीनदशाके कारण मेवाड़का परित्याग करके कुटुम्बियों और साथियों सहित सिन्ध जानेका दृढ़ संकल्प कर लिया। वे अर्वली पर्वतसे नीचे उतरकर मरुभूमिमें पहुँच गये थे कि इतनेमें उनके देशभक्त मंत्री-भामाशाहने आकर उन्हें लौटा लिया। भामाशाहने अपने पूर्वजोंका संचय किया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हुआ पुष्कल द्रव्य राणाको दे दिया । कहा जाता है कि वह इतना था कि उससे पच्चीस हजार मनुष्य बारह वर्षतक आनन्दपूर्वक निर्वाह कर सकते थे ! स्वामिभक्त मंत्रीने राणासे हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि महाराज, मेरे पास जो धन है वह सब आपका ही है; आप स्वदेशको पधारिए और शत्रुसे पुनः युद्ध कीजिए । परिणाम यह हुआ कि थोड़ीसी सेनाके होनेपर भी राणाने चित्तौर, अजमेर और मंडलगढ़के अतिरिक्त शेष सम्पूर्ण मेवाड़ वापिस ले लिया । यद्यपि इस घटनाको ३०० बर्षसे अधिक हो गये तथापि भामाशाहके नामसे जिसने आपत्तिके समय देशके गौरवकी रक्षा की मेवाड़का बच्चा बच्चा परिचित है । निस्सन्देह इससे बढ़कर देशहित और राज्यभक्तिका दूसरा उदाहरण नहीं मिल सकता ।

३–बीकानेरके अमरचन्द्र सुराना ।

अमरचन्द्र बीकानेरके प्रतिष्ठित ओसवाल जातिके एक जैन थे । महाराज सूरतसिंहके समयमें जिनका राज्यकाल सन् १७८७ से १८२८ तक रहा है इन्होंने बहुत प्रसिद्धि पाई ।

सन् १८०५ ईस्वीमें अमरचन्द्जी भटियोंके खान जब्ता खांसे युद्ध करनेके लिए भेजे गये । इन्होंने खान पर आक्रमण किया और उसकी राजधानी भटनेरको घेर लिया । पाँच मासतक किलेकी रक्षा करनेके बाद जब्ता खाँने किलेको छोड़ दिया और उसको अपने साथियोंके साथ रैना जानेकी आज्ञा मिल गई । इस वीरताके कार्यके उपलक्ष्यमें राजाने अमरचन्द्रजीको दीवान पद पर नियत कर दिया ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सन् १८०८ ईस्वीमें जोधपुरनरेश मानसिंहने बीकानेर पर आक्रमण किया। इस अभागे राज्यमें इन्द्रराज सिंघीकी अधीनतामें एक सेना भेजा गई जिसमें कितने ही अधीन राजाओंके वीरगण तथा राजपूतानेके काल अमीरखाँके भी वीर सिपाही शामिल थे। सूरतसिंहने भी सेना इकट्ठी की और अमरचन्द्रको उसका सेनापति बनाकर शत्रुको रोकनेके लिए भेजा। दोनों सेनायें बपरीके मैदानमें मिलीं। थोड़ी देर तक घमासन युद्ध होनेके बाद–जिसमें अमरचन्द्रके दो सौके करीब आदमी काम आगये थे–अमरचन्द्र बीकानेरकी तरफ़ लौट पड़ा। विजयी इन्द्रराजने उसका पीछा किया और अन्तमें दोनों राज्योंमें गजनेरमें सन्धि हो गई।

सूरतसिंहके राज्यमें बीकानेरके ठाकुर कुछ स्वाधीनसे हो चले थे। इस कारण महाराजने इस असन्तोषजनक दशाको समूल नष्ट करने, नीच ठाकुरोंको दण्ड देने और उनकी करतूतका फल उन्हें चखानेके लिए अमरचन्दको भेजा। चार वर्षतक अमरचन्द इस कार्यमें लगा रहा। इसके कहनेमें हमें संकोच नहीं होता कि उसने अपने कर्त्तव्यके पालनमें बहुत ही निष्ठुरता दिखाई और शोणित-सरिता बहाई जिसके लिए वह अवश्य कलङ्की है।

हा! यह उसे कभी न सूझा कि जो मैं दूसरेके लिए कर रहा हूँ वही मेरे लिए भी एक रोज़ होगा। यदि मैं दूसरोंके लिए गड्ढा

---

१ इन्द्रराज सन् १७६७ ईस्वीमें ओसवाल जातिके सिंघवी कुलमें सोजतमें पैदा हुआ था। ओसवालोंमें यही सबसे बड़ा जेनरल हुआ है। इसने न केवल बीकानेरके राजाको हराया, किन्तु जयपुरका मान भी इसीने गलत किया। सन् १८१५ ईस्वीमें यह जोधपुरमें मार डाला गया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खोदता हूँ तो दूसरे मेरे लिए कुँवा खोदेंगे। उसने पहले सरनबीके ठाकुरोंसे भारी कर वसूल किया, फिर रतनसिंह बेदवन्त पर हमला किया और उसको शूली पर चढ़ा दिया। पश्चात् भट्टियोंपर आक्रमण किया और सबको मार डाला। ३०० में से केवल एक अपनी स्त्रीसहित बचकर भाग सका। फिर शीघ्र ही नाहरसिंह और पूरनसिंह इन दो प्रसिद्ध ठाकुरोंपर आक्रमण किया और उनको कैद करके बीकानेर भेजा जहाँ वे दोनों शूली पर चढ़ा दिये गये।

सूरतसिंहजीने अमरसिंहके इस वीरताके कार्यसे प्रसन्न होकर उसको अपने महलमें अपने साथ भोजन करनेकी आज्ञा देकर सम्मानित किया।

सन् १८१९ ईस्वीमें अमरचन्द्रजी सेनापति बनाकर चुरूके ठाकुर शिवसिंहके साथ युद्ध करनेको भेजे गये। अमरचन्द्रने शहरको घेर लिया और शत्रुका आना जाना रोक दिया। जब ठाकुरसाहब अधिक कालतक न ठहर सके तो उन्होंने अपमानकी अपेक्षा मृत्युको उचित समझा और आत्मघात कर लिया। अमरचन्द्रकी इन सेवाओंसे राजा बड़ा प्रसन्न हुआ, यहाँतक कि उसको रावकी पदवी, एक खिलत तथा सवारीके लिए एक हाथी प्रदान किया।

परन्तु अब अमरचन्द्रके जीवनने पल्टा खाया। उसके भाग्यके सितारेकी ज्योति और कान्ति धीरे धीरे मलीन होने लगी। उसकी विजयसे उसके शत्रुगण ईर्षावश भड़क उठे और उसके नाश-

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

के लिए एक षड्यन्त्र रचा गया। शत्रुओंने उसको उन्नतिके शिखरसे केवल गिरा ही नहीं दिया किन्तु उसका एक फौजदारी मुकद्दमेंसे सम्बन्ध कराकर उससे भारी जुर्माना दिलवाया। सन १८१७ ईस्वीमें पिण्डारियोंके सर्दार अमीरखाँके साथ साजिश करनेका झूठा दोष उसपर लगाया गया। यद्यपि उसके मित्रोंने उसकी रक्षाके लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया परंतु कुछ लाभ न हुआ। उसके शत्रुओंकी बन आई और वह वेचारा निरपराध अत्यन्त निर्दयतासे मार डाला गया।

—नाथूराम जैन,
लखनऊ।

मुक़द्दमेबाजीके दोष।

भारतवासियोंकी आजकलकी निर्धनता और दरिद्रताका एक कारण हदसे ज्यादा मुक़द्दमेबाज़ी भी है। जिन लोगोंको ऐतिहासिक ग्रंथोंके पढनेका अवसर प्राप्त हुआ है वे जानते हैं कि प्राचीन समयमें भारतवासी इस दोषसे कितने रहित थे। एक चीनी तीर्थयात्री सातवीं शताब्दीमें भारतवर्षकी यात्रा करके जब लौट कर अपने देशमें गया; तब वह भारतवासियोंके विषयमें ऐसा कहता था कि "भारवासी झूठ बोलना महापाप समझते हैं इस लिए वे बिलकुल झूठ नही बोलते।" इस बातको उसने स्वरचित एक पुस्तकमें भी लिख दिया है। प्रोफेसर मेक्समूलर साहबने (जो यूरोपमें बड़े भारी संस्कृतके विद्वान् और भारत-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्षके सच्चे हितैषी थे) अपनी पुस्तक " भारतसे हम क्या सीख सकते हैं " में लिखा है कि प्राचीन आर्य्यगण सत्य बोलनेके लिए बहुत प्रसिद्ध थे। परन्तु शोक है कि आज कल हम उसी भारतके निवासी और उसी प्रशंसित आर्य्यजातिकी सन्तान इतने बदनाम हो गये हैं कि यूरोप अमेरिका और अन्य सभ्य देशके लोग हमारे नामसे घृणा करते हैं। विदेशी लोग हमको झूठे, कपटी, छली और दगाबाजके नामसे पुकारते हैं। जिन लोगोंको आज कल कचहरियों, अदालतोंकी कार्रवाईका ज्ञान है, वे भलीभाँति जानते हैं कि कितने लोग दीवानी फौजदारी अदालतमें कैसा झूठ बोलते हैं और कदाचित् उतना झूठ वे कचहरीके बाहेर कभी नहीं बोलते होंगे। अनेक जन चार आनेके लिए पवित्रसे पवित्र नामोंकी शपथें खाते हैं, जिसका परिणाम यह हुआ कि आज कल हमारी जाति असत्य, छल, कपटके लिए बहुत बदनाम हो गई है। यहाँतक कि परस्पर मित्रों और रिश्तेदारोंमें भी एक दूसरेपर विश्वास नहीं रहा और इसी लिए भारतवासी वाणिज्य, तिजारतमें भलीभाँति उन्नति नहीं कर सकते। इस मुकद्दमेबाजीसे भारतवासियोंको जो हानि पहुँचती हैं वह बुद्धिमानोंसे छिपी नहीं। असल रकमसे पाँच गुणा अधिक मुकद्दमा पर खर्च हो जाता है और उभयपक्ष (फरीकेन) मुकद्दमेबाजीसे बरबाद हो जाते हैं। इस कारण हमें पञ्चायत करनी चाहिए।

टहलराम गंगाराम जमींदार।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भारतमें शिक्षाकी उन्नति।

भारतवर्ष अपनी प्राचीन सभ्यता धन और प्रतापको कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक शिक्षा मुफ्त और जरूरी न दी जायगी। यदि भारतसरकार शिक्षाको मुफ्त और जरूरी रूपमें नहीं देना चाहती तो भारतके नेताओं, राजा महाराजाओं, जागीरदारों, कमेटीके मेम्बरों, सभाओं और शुभचिन्तकोंका कर्तव्य है कि वे स्वयं ही इस कार्य्यको अपने हाथमें लें। हर एक मन्दिर और धर्मशालाके साथ वाचनालय और पुस्तकालय खोलें जहाँ वे लोग जिनको दिनमें फुर्सत मिलती है शिक्षा प्राप्त कर सकें। मजदूरोंके लिए हर एक गाँवमें और नगरकी हर एक गलीमें रात्रि-पाठशालायें खोली जायँ।

जरूरी सामाजिक राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक विषयों पर देशी भाषाओंमें पुस्तकें छापी जायँ और उनको मुफ्त या थोड़ी सी कीमत पर साधुओं और ब्राह्मणोंमें जो देशी भाषायें जानते हों बाँटी जाय। क्योंकि साधुओं और ब्राह्मणोंका आम लोगों पर बहुत प्रभाव है। ज्यों ही इन धार्मिक श्रेणियोंके समय और ताकतोंको जो दुर्भाग्यसे इस समय नष्ट हो रही हैं सामाजिक राजनैतिक और धार्मिक विषयोंके सुधारके लिए काममें लगाया जायगा, त्यों ही हिन्दू जाति अवश्यमेव उन्नत होगी। अन्य सभ्य जातियाँ कुदरतके तत्त्वोंको यानि अग्नि, वायु, जलको, रेलों, स्टीमरों, मिलों, हवाईजहाजोंमें लगा रही हैं और अपनी सभ्यता, धन और अभ्युदयको बढ़ा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रही हैं; परन्तु शोक कि हम कुदरतके तत्त्व स्वामियों अर्थात् पुजारी श्रेणियों, साधुओं और ब्राह्मणोंको अपनी जातिकी उन्नतिके लिए इस्तेमाल नहीं कर रहे हैं ।

ईश्वर उनकी मदद करता है जो अपनी मदद आप करते हैं ।

टहलराम गंगाराम, जमीदार ।

डेरा स्माइलखां ।

विविध-प्रसङ्ग ।

१-हमारे धर्मतीर्थ और मुक़द्दमेबाज़ी ।

अन्यत्र डेरा स्माइलखाँके जमींदार श्रीयुत टहलराम गंगारामजीका एक लेख प्रकाशित किया जाता है जिसमें मुक़द्दमेबाज़ीके दोष बतलाये गये हैं और अपने झगड़ोंको अदालतोंतक न ले जाकर पंचायतियों द्वारा तै कर डालनेकी प्रेरणा की गई है। हम अपने पाठकोंका ध्यान उक्त लेखकी ओर आकर्षित करते हैं और इसके साथही जैनतीर्थोंपर जो मुक़द्दमें चला करते हैं उनके विषयमें विशेषरूपसे विचार करनेकी प्रार्थना करते हैं । हमें कुछ समयके लिए धर्मान्धता और धार्मिक द्वेषको एक ओर रख देना चाहिए और शान्त होकर सोचना चाहिए कि तीर्थोंकी मुक़द्दमेबाज़ीमें प्रतिवर्ष जो लाखों रुमया ख़र्च होता है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वह कहाँ तक उचित है और उसके बन्द करनेका कुछ उपाय भी है या नहीं ?

तीर्थक्षेत्रोंके मुखियाओंको और मुक़द्दमेबाज़ीके सूत्रधारोंको पहले यह सोचना चाहिए कि आजकलके समयमें रुपयेका क्या महत्त्व है और उसके सदुपयोग तथा दुरुपयोगसे किसी जातिकी उन्नति अवनतिसे कितना सम्बन्ध है ? तीर्थोंमें जो रुपया आता है उसका अधिकांश उन लोगोंकी कमाईका होता है जो सबेरेसे शामतक कठिन परिश्रम करके अपने कुटुम्बका निर्वाह करते हैं और परम्परागत धार्मिक विश्वासके कारण पुण्य समझकर आपलोगोंको सौंप देते हैं। मुकद्दमें लड़ते समय आपको इन बेचारोंकी पसीनेकी कमाईका ख़याल अवश्य कर लेना चाहिए। जिन रुपयोंसे हज़ारों भूखे प्यासे दरिद्रियोंके प्राण बचाये जा सकते हैं, हजारों निरक्षर विद्वान बनाये जा सकते हैं, लाखों दुखी जीवोंकी रक्षा की जा सकती है और धर्मप्रभावनाके बीसों कृत्य किये जा सकते हैं उन्हीं रुपयोंको धर्मके भयसे पानीमें फेंकते समय—वकील बैरिस्टरोंकी जेबोंमें भरते समय बड़े ही अफसोसकी बात है कि न आपके हाथ ही काँपते हैं और न आप इसको कुछ बुरा ही समझते हैं।

गत पचास वर्षोंमें मक्सी, सम्मेदशिखर, सोनागिर, पावापुरी, अन्तरिक्ष, आदि तीर्थोंके मुकद्दमोंमें बहुत ही कम ख़र्च हुआ होगा तो लगभग २९ लाख रुपया अवश्य ही ख़र्च हो गया होगा ! क्या आप समझते हैं कि इन सब रुपयोंका सदुपयोग हुआ है और इनसे इन मुक़द्दमोंसे अच्छे और कोई कृत्य न किये जासकते थे ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पच्चीस लाखकी रकम थोड़ी नहीं होती है! इतनी बड़ी रकमसे जैनधर्म और जैनजातिकी उन्नतिके लिए बहुत कुछ किया जा सकता था।

इस मुक़द्दमेबाज़ीमें हमारा केवल रुपया ही बरबाद नहीं होता है; इसके साथ ही हमारी धार्मिक हानि भी बहुत बड़ी होती है। कहाँ तो हमारे धर्मका यह उपदेश कि सारे संसारमें मैत्रीभावकी वृद्धि करो, शत्रुपर भी क्षमा करो और कहाँ उसी पवित्र धर्मके नामसे हमारा यह अपने भाइयोंसे शत्रुता बढ़ाना, कषायोंकी वृद्धि करना और शत्रुताकी जड़को मज़बूत बनानेके लिए निरन्तर प्रयत्न करना! क्या जैनधर्मकी महती उदारता, मित्रता और मध्यस्थताकी पालना हमें इसी तरह करना चाहिए?

और यह कहनेकी तो ज़रूरत ही नहीं है कि ये धार्मिक मुक-द्दमें देशकी एकताको नष्ट करनेके लिए, पारस्परिक सहानुभूति और सहयोगिताको नष्ट करनेके लिए कुठारके तुल्य हैं। इनके शान्त हुए बिना देशकी उन्नतिकी आशा करना नितान्त मूर्खता है।

जैनसमाजको अब रुपयेका मूल्य समझ लेना चाहिए। पहला ज़माना अब नहीं रहा। इस समय हमारी जो संस्थायें हैं उनके पेट प्रायः खाली पड़े हैं, नई नई संस्थाओंकी आवश्यकतायें नज़र आ रही हैं और देशकी सार्वजनिक संस्थायें भी हमसे द्रव्यकी उचित आशा रखती हैं। ऐसे समयमें यदि हम द्रव्यके सदुपयोग-पर ध्यान न देंगे और इन मुकद्दमोंमें ही अपना सर्वस्व लुटाते रहेंगे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो हमारी संस्थायें नष्ट होने लगेंगीं और हममें जो थोड़ा बहुत काम हो रहा है वह भी न होगा।

और मुकद्दमें लड़नेसे कुछ फ़ायदा भी तो नहीं होता है। 'मरज बढता ही गया ज्यों ज्यों दवा की' वाली बात यहाँ अच्छी तरह घटित होती है। एक मुकद्दमा तै ही नहीं होता कि दूसरा दायर हो जाता है। कभी श्वेताम्बरी हारते हैं कभी दिगम्बरी जीतते हैं। आज सम्मेदशिखरपर तो कल सोनागिरपर, परसों अन्तरीक्षपर तो तीसरे दिन और किसी तीर्थपर। इस तरह परम्परा ज़ारी ही रहती है। गत बीस वर्षोंमें शायद ही ऐसा कोई समय आया हो जब दिगम्बरी श्वेताम्बरियोंका कोई न कोई मुकद्दमा किसी न किसी तीर्थपर ज़ारी न रहा हो। यदि जी खोलकर लड़ लेनेसे ही इन झग- डोंका अन्त आ जानेकी आशा होती तो हम कभी शान्त होनेके सम्मति नहीं देते; परन्तु अन्त हो तब न! यदि दिगम्बरी हज़ार रुपया खंर्च कर सकते हैं तो श्वेताम्बरी दो हज़ार खर्च करनेको तैयार हैं और श्वेताम्बर दो हज़ार ख़र्च करते हैं तो दिगम्बरी तीन हज़ार ख़र्च करनेकी कोशिश करते हैं। कषायभावोंकी और धार्मिक द्वेषकी भी दोनों ओर कमी नहीं है। इस विषयमें एक दूसरेसे सवाये बढ़ जानेका दोनों ही दावा करते हैं। रही यह बात कि तीर्थोंपर प्राचीन स्वत्व किसका है, सो इसका निबटारा कभी होनेका नहीं। कहीं दिगम्बरियोंका स्वत्व पुराना है और कहीं श्वेताम्बरियोंका। कहीं एकका स्वत्व तो पुराना है, परन्तु वह पुराना सिद्ध नहीं कर सकता। कहीं एकका नया है; परन्तु वह मजिस्ट्रेटकी आँखोंमें धूल झोंककर नया सिद्ध कर देता है। ग़रज़

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यह कि किसीकी प्राचीनता या नवीनताके सिद्ध होने न होनेसे भी इन झगड़ोंके अन्त होनेका कोई सरोकार नहीं है ।

तब इस मुकद्दमेबाज़ीका अन्त कैसे हो? इसके उत्तरमें हम यह प्रेरणा नहीं करते हैं कि दिगम्बरी श्वेताम्बरी आपसमें मिलकर एक हो जायँ, या तीर्थोंका मानना ही छोड़ दिया जाय । ऐसा होना संभव नहीं और इष्ट भी नहीं । अन्त होनेका उपाय केवल यही है कि दोनों सम्प्रदायवाले इसके अन्त करनेका निश्चय कर लें और समझ लें कि इसीमें जैनसमाजका कल्याण है । यदि दोनों ही समाजके मुखिया और मुकद्दमेबाज़ीके सूत्रधार यह समझ लें अथवा वे न समझें तो सारा समाज उन्हें समझनेके लिए लाचार कर दे, तो तीर्थोंकी मुकद्दमेबाज़ीका अन्त शीघ्र ही हो सकता है । यहाँ यह अवश्य कहना पड़ेगा कि इसके अन्त करनेके विचार दोनों ही सम्प्रदायवालोंके होंगे तभी कुछ सफलता होगी, एकके विचारोंसे कुछ न होगा ।

यदि कभी ऐसी बातोंकी चर्चा की जाती है तो मुखियोंकी ओरसे प्रायः यह उत्तर मिलता है कि हम क्या करें? श्वेताम्बरी लोगोंने बहुत सिर उठाया है, वे हमें दर्शन पूजनतककी मनाई करते हैं, तब हम मुकद्दमे न लड़ें तो क्या करें? अथवा सन्धिका प्रस्ताव हम ही क्यों करें? हम क्या किसी बातमें उनसे कुछ कम हैं? वे तो सन्धि करना ही नहीं चाहते । कहना नहीं होगा कि श्वेताम्बरियोंके मुखिया भी इसी प्रकारका उत्तर देते हैं और वे दिगम्बरियोंको दोषी ठहरते हैं । पर वास्तवमें देखा जाय तो निर्दोष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दोनों ही नहीं हैं। यह ठीक है कि कभी कभी किसी एक पक्षकी ओरसे अधिक अन्याय हो जाता है, परन्तु साथ ही यह बात भी है कि मौका पानेपर दूसरा पक्ष भी अपनी शक्ति भर अन्याय करनेमें कुछ बाकी नहीं रख छोड़ता। ये सब बातें यही प्रकट करती हैं कि दोनों ही अपनी अपनी प्रधानता चाहते हैं और वास्तवमें सन्धि करना उन्हें अभीष्ट नहीं है।

अब समय आ गया है कि कुछ शिक्षित लोग आगे बढ़ें और इस आन्दोलनको उठा लेवें। यदि इस विषयमें जीजानसे परिश्रम किया जायगा और वह लगातार जारी रक्खा जायगा तो अवश्य सफलता होगी। सच पूछा जाय तो अभीतक इस विषयमें एक भी व्यवस्थित प्रयत्न नहीं किया गया है और यही कारण है जो इस ओर लोगोंका बहुत ही कम ध्यान गया है।

हमारी समझमें इसके लिए एक सभा स्थापित होनी चाहिए जिसमें दोनों ही सम्प्रदायोंके भाई मेम्बर बनाये जावें। यह सभा ट्रेक्टोंके द्वारा, लेखोंके द्वारा, व्याख्यानोंके द्वारा, अपने विचारोंका प्रचार करे, और कमसे कम वर्षभरमें एक बार दिगम्बरी और श्वेताम्बरी कान्फरेंसोंके साथ साथ बारी बारीसे अपना अधिवेशन करे। प्रत्येक तीर्थके प्रत्येक मुकद्दमेंकी बुनियादका पता लगावे, उसके कारण मालूम करे और फिर उसके सम्बन्धमें दोनों पक्षके मुखियोंको पत्रव्यवहारसे या जरूरत हो तो डेप्यूटेशन भेजकर समझावे और सुलहकी कोशिश करे। इस पद्धतिसे यदि काम चलाया जायगा तो वर्ष ही दो वर्षमें इसका अच्छा फल नज़र आये बिना न रहेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हम आशा करते हैं कि हमारे सहयोगी इस विषयकी चर्चाको जारी रक्खेंगें और दोनों सम्प्रदायोंके अगुओंके कानोंतक इस आवश्यक सन्देशको अवश्य पहुँचा देंगे।

२ 'भट्टारक' पदकी दुर्दशा।

किसी समय 'भट्टारक' पद बहुत ही पूज्य और प्रतिष्ठित समझा जाता था; परन्तु समयके फेरसे आज वही पद बहुत ही निन्द्य और अपमानास्पद गिना जाने लगा है। आज कोई भी अच्छा विद्वान् और विचारशील पुरुष समझाने बुझाने पर भी किसी भट्टारककी गद्दी पर बैठनेके लिए तैयार नहीं होता है। इससे एक नीतिज्ञका यह वचन बहुत ही सच जान पड़ता है कि "कोई पद मनुष्यको ऊँचा नहीं बना सकता, मनुष्य ही पदको ऊँचा बनाता है। मनुष्योंकी करामातसे ही आज भट्टारक पद सिंहासनसे नीचे लुढ़क कर पैरोंसे ठुकराने योग्य हो गया है। कई सौ वर्षोंसे इस पद पर प्रायः ऐसे ही लोग बिठाये गये जो इसके सर्वथा अयोग्य थे और अब तो प्रायः ऐसे ही लोग इस पदके एकाधिकारी हो गये हैं जिनमें मनुष्यताका पता ढूंढ़ने पर भी कठिनाईसे मिलता है। ऐसी दशामें यदि इस पूज्यपदकी दुर्दशा हो गई तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

३ भट्टारकोंका टिमटिमाता हुआ दिया।

दिगम्बर जैनसमाजका एक बहुत बड़ा भाग बहुत दिनोंसे इन महात्माओंके शासनके जूएँको अपने कन्धोंसे उतार कर फेंक चुका है जो कि आज तेरहपन्थके नामसे प्रसिद्ध है और इसके कारण भट्टारकोंका शासनप्रदीप निर्वाण होनेके बहुत ही समीप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पहुँचता जा रहा है। वह कभीका बुझ गया होता, परन्तु एक तो समाजका एक बहुत बड़ा भाग अज्ञानके गढ़हेसे निकलनेकी कोशिश ही नहीं करता है और दूसरे बीच बीचमें कुछ भट्टारक भी ऐसे होते रहे हैं जो इस पदकी इज्जतको बहुत कुछ बचाये रहे हैं, इस लिए वह अब भी टिमटिमा रहा है। किन्तु ऐसा मालूम होता है कि अब बहुत दिनोंतक न टिक सकेगा–उसका स्नेह निःशेष हो चुका है और बर्तिका भी नष्ट हो चुकी है। हमारी समझमें अब उसकी ज़रूरत भी नहीं है। एक प्रतिष्ठित पदकी दिल्लगी करानेके लिए टिमटिमाते रहनेकी अपेक्षा तो उसका बुझ जाना ही अच्छा है।

४–भट्टारक विजयकीर्तिकी सुकीर्ति।

हितैषीके पाठक ब्रह्मचारी मोतीलालके शुभनामको भूले न होंगे। आजकल आपके बड़े ठाठवाट हैं–आपके सुखसौभाग्यका सूर्य इस समय मध्याह्न पर पहुँचा हुआ है। अब आप मोतीलाल नहीं, किन्तु श्री १०८ भट्टारक विजयकीर्तिजी महाराज कहलाते हैं। आपके साथ इस समय गाड़ी, घोड़ा, पालकी आदि सारे राजोचित साजबाज हैं। शास्त्री, चपरासी, हवालदार, रसोइया, नाई, धोबी, खिदमतगार आदि २०–२५ नौकर चाकर हैं। ज़री और मखमलके वस्त्रोंका उपयोग करके आप अपने पूर्वनिर्ग्रन्थोंकी दरिद्रताके दोषको दूर कर रहे हैं। आपका प्रतिदिनका खर्च सिर्फ़ २५–३० पचीस तीस रुपया रोज़ है। इस समय आप बाकरोल नामक ग्राममें आनन्द कर रहे हैं और शायद चातुर्मास भर वहीं रहेंगे। ग्राममें जैन भाइयोंके सिर्फ़ ३० घर हैं, जिनकी आर्थिक अवस्था बहुत मामूली है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पर मामूली होनेसे ही क्या हो सकता है ? श्रावक होनेका फल तो उन्हें कुछ न कुछ मिलना ही चाहिए ! गवर्नमेंट जिस तरह आवश्यकता पड़ने पर किसी स्थानमें प्यूनीटिव पुलिस बिठा देती है और उसका खर्च वहाँके रहनेवालोंसे बसूल करती है उसी तरह हमारा धर्म भी जिस स्थानके श्रावकोंके लिए आवश्यक समझता है उस स्थानपर इस पाखण्ड-पुलिसको भेज देती है जो श्रावकोंकी अक्लको बहुतही जल्द ठिकाने ला देती है। अभागे गुजरातके श्रावको ! अपनी मूर्खताका, अन्धश्रद्धाका और अविचारशीलताका यह सुपरिणाम भोगो और तब तक भोगते रहो जबतक तुमने जैनधर्मका और उसके गुरुओंका वास्तविक स्वरूप नहीं समझ लिया है ।

५ भट्टारकजीका प्रतिज्ञापत्र ।

जिस समय ब्रह्मचारी मोतीलालजी ईडरकी गद्दीपर बैठनेके लिए उम्मेदवार हो रहे थे उस समय आपने पूज्य पं० पन्नालालजी बाकलीवालको एक प्रतिज्ञापत्र लिख दिया था । गुरुजी (पं० पन्नालालजी) ने अब उक्त प्रतिज्ञापत्र सार्वजनिक पत्रोंमें प्रकाशित करवा दिया है । उसमें लिखा है कि " मैं भट्टारक होनेपर ईडर तथा सागवाड़ा आदिके प्राचीन शास्त्रभण्डारोंका जीर्णोद्धार कराऊँगा, उनके प्रचारके लिए अर्थव्यय करूँगा, अपने उपासक श्रावकोंके प्रत्येक ग्राममें पुस्तकालय खोलूँगा, पाठशालायें स्थापित करूँगा, उपदेशकों, समाचारपत्रों और ग्रन्थमालाओंके द्वारा धर्मका प्रचार करूँगा । यदि मैं ऐसा न करूँ और कोई धर्मविरुद्ध या नीतिविरुद्ध कार्य करूँ, तथा तीन बार चेतावनी देनेपर भी न मानूँ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो आप लोग और रायदेशके पंच मुझे जो सज़ा देंगे, उसे मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा।" हमारा विश्वास है कि मोतीलालजी इसी प्रतिज्ञापत्रकी कृपासे ही आज अपनी पाँचों अँगुली घीमें तर कर रहे हैं। यदि गुरुजीको वे प्रतिज्ञापत्रके द्वारा धर्मप्रचारका विश्वास न दिलाते और गुरुजी सिफारिश न करते तो यह चार दिनाकी चाँदनी उन्हें लभ्य न होती; परन्तु ऐसे अच्छे मौक़ेको मोतीलालजी जैसे पुरुषरत्न कैसे चूक सकते थे? और गुरुजी जैसे दुनियाकी चालबाज़ियोंसे सर्वथा अज्ञान और मनुष्यप्रकृतिको न पहचाननेवाले भोले धर्मप्रचाराभिलाषी भी क्या बारबार मिलते हैं? आपने गुरुजीको बना लिया और लिख दिया प्रतिज्ञापत्र। अब गुरुजी और रायदेशके पंच उक्त प्रतिज्ञापत्रको शहद लगाकर चाँटा करें और भट्टारकजी महाराज अपनी चालबाज़ीपर खुश होते हुए हलुआ पूड़ियोंपर हाथ साफ़ किया करें।

६ शेतवालोंके बालक-भट्टारक।

लातुर (निज़ाम) में शेतवाल जातिके भट्टारकोंकी एक गद्दी है। वह अभीतक खाली थी। वर्धाके श्रीयुत यादव दाजीबा श्रावणेके पत्रसे मालूम हुआ कि अब उक्त गद्दीपर एक बालक बिठा दिया गया है और पं० रामभाऊजी उसकी पूजा उपासना करनेके लिए भक्तमण्डली एकट्ठी कर रहे हैं। बालककी उम्र सिर्फ ११ वर्षकी है। वह मराठीकी सिर्फ़ तीन कक्षायें पढ़ा है! शेतवाल समाज अब अपने धर्मकी और समाजकी उन्नति इसी बालकके चरणोंके प्रसादसे करेगा! 'प्रगति आणि जिनविजय' के सम्पादक इस विष-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यमें एक नोट करते हुए लिखते हैं—"हमारी समझमें नहीं आता कि हम जैनसमाजके इस लांछनास्पद अज्ञानके लिए रोवें या दुनियाको झुकानेवालों (पं० रामभाऊ आदि) की अक्ककी तारीफ करें। 'गद्दी खाली है' इस कारणसे निरन्तर आँसू बहानेवाले शेतवाल भाइयो ! करो इस गुरुके स्वाँगका सत्कार और होने दो जातिकी उन्नति ! "

७ तेरहपंथियोंके भट्टारक ।

चौंकिए नहीं, हम आजकलके कुछ त्यागी ब्रह्मचारियोंको तेरहपंथियोंका भट्टारक कहते हैं। हमारी समझमें ये भी एक तरहके भट्टारक हैं। तेरहपंथी भाई बीसपंथियोंके भट्टारकोंको छोड़कर आजकल इन्हींकी पूजा करते हैं। मूर्खता और निरक्षरतामें तो ये भट्टारकोंकी ही जोड़के हैं; परन्तु चरित्रमें अभी इनका नम्बर बहुत पीछे है। पर, यह आशा अवश्य है कि यदि श्रावकोंकी भक्ति इनके पीछे इसी तरह अन्धी होकर दौड़ती रही तो ये बहुत ही जल्दी अपनी इस कमीको पूरी कर डालेंगे। यहाँ आये हुए पं० मूलचन्दजीसे मालूम हुआ कि श्रीमान् त्यागीजी महाराज मुन्नालालजी क्षुल्लक किसी एक स्थानके मन्दिरमें अपनी एक पेटी पैक करके और शीलमुहर लगाकर रख गये थे। उनके बाद ही वहाँ ऐलक पन्नालालजी जा पहुँचे। त्यागियोंमें पारस्परिक सौहार्द कैसा होता है, सो तो प्रायः सब ही लोग जानते हैं और फिर किसीने जिक्र कर दिया कि मुन्नालालजी अपनी एक पेटी यहाँके पंचोंके सिपुर्द कर गये हैं ! सुनते ही

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्यागीजीने पेटी मँगवाई। लोगोंने बहुत मना किया कि पेटी मत खोलिए; परन्तु उन्होंने एक न मानी और पेटी खुलवा डाली! देखा तो उसमें २०००) दो हजार रुपयेके नोट रक्खे हुए थे। खण्डवस्त्र मात्र रखनेवाले क्षुल्लकोंके पास नोट! दो हजारके!! लोगोंके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। हम यह जाननेके लिए उत्सुक हो रहे हैं कि इसके आगे क्या हुआ और अब उक्त रुपये किसके पास हैं। क्षुल्लकजी महाराजसे पूछना चाहिए कि उनके पास उक्त नोट कहाँसे आये और यदि वे किसी मंत्रके बलसे नोट बनाना जानते हों तो यह शुभसंवाद उनके भक्तवृन्दोंके पास अवश्य पहुँचा देना चाहिए।

८ भट्टारकोंसे समाजकी रक्षा कैसे हो?

इन भट्टारकों और त्यागियोंसे समाजकी रक्षा करनेका प्रधान उपाय अन्धश्रद्धाका काला मुँह कर देना है। यदि अन्धश्रद्धाको हमारे यहाँ स्थान न मिलता तो आज न भट्टारकोंके अन्यायोंसे हमें पीडित और लज्जित होना पड़ता और न ये त्यागियोंकी ही लीलायें देखनी पड़तीं। यह सब अन्धश्रद्धाकी कृपार्हीका फल है। अन्धश्रद्धा उस पुरुषको अपने बड़प्पनका या पूज्यताका दुरुपयोग करनेके लिए ललचाती है जिसपर कि लोग श्रद्धा करते हैं। यदि अन्धश्रद्धा न हो तो न उपासकोंका ही अधःपतन हो और न उपास्य साधु भट्टारकोंको आज कल जैसी नीचवृत्तिका अवलम्बन करना पड़े। इसलिए जैसे बने तैसे–शिक्षाका प्रचार करके, उपदेशोंका भ्रमण कराके, छोटे छोटे ट्रैक्टोंके द्वारा या समाचार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पत्रोंद्वारा भट्टारकोंका कच्चा चिट्ठा प्रकाशित करके इस अन्धश्रद्धाको देशनिकाला दे देना चाहिए । इससे अच्छा और कोई उपाय इस रोगसे मुक्त होनेका नज़र नहीं आता ।

९ एक तात्कालिक उपाय ।

इस समय भट्टारकोंके चातुर्मास हो रहे हैं । शायद ही ऐसा कोई भट्टारक हो जिसका ख़र्च २०–२५) रुपये रोज़से कम हो । ये सब रुपये निरीह भोले श्रावकोंसे वसूल किये जाते हैं । एक दो स्थानोंसे हमें जो समाचार मिले हैं उनसे बड़ा ही दुःख होता है और भट्टारकोंपर बड़ी ही घृणा उत्पन्न होती है । इन लोगोंने अब बड़ा ही करालरूप धारण किया है । ये श्रावकोंके द्वारोंपर धरणा देकर बैठते हैं, लंघनें करते हैं, कमंडलु फोड़ते हैं. और जब इससे भी काम नहीं चलता है तब अपने ग़रीब सिपाहियोंसे श्रावकोंको पकड़वाते और पिटवाते तक हैं! गरज़ यह कि जब तक रुपया नहीं पा लेते तब तक श्रावकोंका पिण्ड नहीं छोड़ते हैं! भाइयो ! यह क्या है ? जैनधर्मकी इससे अधिक दुर्दशा और क्या हो सकती है ? ग्रामीण अज्ञानी श्रावकोंमें यद्यपि इस विपत्तिसे बचनेकी शक्ति नहीं है; परन्तु यदि हमारे समाजके शिक्षित चाहें तो इस मर्ज़का तात्कालिक उपाय हो सकता है । प्रयत्न करनेसे, आन्दोलन करनेसे, सब लोगोंकी सम्मतिसे ये लोग अनधिकारी ठहराये जा सकते हैं और गवर्नमेंटके द्वारा इस तरहके अत्याचार करनेसे रोके जा सकते हैं । हम आशा करते हैं कि हमारे गुजरातीभाई इस विषयमें आगे बढ़नेका साहस दिखलायँगे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०-जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा।

सहयोगी 'जैनप्रभात' के सम्पादकमहोदयने बाबू देवेन्द्र-प्रसादजीसे मुलाकात करके भवनके सम्बन्धमें एक नोट प्रकाशित किया है। उसमें कहा गया है कि भवनके विषयमें जैनमित्र जैन-हितैषी आदिने जो आक्षेप किये हैं वे निर्मूल हैं। भवन एक बहुत बड़ी सूचीके बनानेमें व्यस्त हो रहा है जो समयसाध्य व्ययसाध्य और परिश्रमसाध्य है। लोगोंको ग्रन्थ सहजमें नहीं मिल सकते हैं, इसका कारण यह है कि बहुतसे ग्रन्थ ऐसे जीर्ण हैं जिन्हें हम बाहर भेजनेसे लाचार हैं। पत्रसम्पादकोंको चाहिए कि भवनको स्वयं जाकर देखें; इसके बिना कुछ टीका टिप्पणी न करें और समाजको चाहिए कि उसे सहायता प्रदान करें। इत्यादि। अच्छा होता यदि बाबू सूरजमलजी उक्त नोटके बदले बाबू देवेन्द्रप्रसाद-जीसे—यह प्रकाशित करवाते कि, "भवनकी पाँच वर्षकी रिपोर्ट अमुक तिथि तक प्रकाशित हो जायगी और सर्व साधारणके लाभके लिए ग्रन्थोंकी एक संक्षेपसूची बहुत जल्द प्रकाशित की जायगी, भवनमें समयपर पत्रोत्तर देनेका यथेष्ट प्रबन्ध कर दिया गया है और लेखक रख लिये गये हैं, जिसे चाहिए वह चाहे जिस ग्रन्थकी नकल करवाके मँगवा ले।" बिना इसके भवनकी चाहे जितनी प्रशंसा की जाय, उसके सूचीपत्रके कार्यको चाहे जितना महान् कार्य बतलाया जाय और पत्रसम्पादकोंको इस लिए कि वे भवनके कार्यकर्ताओंको उत्साहित करते रहें चाहे जितने उपदेश दिये जावें, आक्षेप निर्मूल नहीं हो सकते। किसी भी सार्वजनिक संस्थाके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कामकी तबतक प्रशंसा नहीं हो सकती है जबतक कि उसका हिसाब किताब साफ़ न हो, उससे सर्वसाधारण लाभ न उठा सकें और उसमें क्या होता रहता है इसका समय समयपर लोगोंको ज्ञान न कराया जाय। संस्थाकी कोरी प्रशंसाओंसे, उसका काम इतने महत्त्वका है, ऐसा है, वैसा है आदि कहनेसे और आक्षेप करनेवालों पर अप्रसन्न होनेसे कोई भी संस्था जनसाधारणकी सहानुभूति प्राप्त नहीं कर सकती है। बाबू देवेन्द्रप्रसादजी और बाबू किरोड़ीचन्द्रजीको इस ओर ध्यान देना चाहिए और बातें बनाना छोड़कर काम करके दिखलाना चाहिए।

क्या हम पूछ सकते हैं कि भवन जो सूचीपत्र बना रहा है वह कितना बड़ा बनेगा और उसमें क्या क्या बातें रहेंगी? डाक्टर भाण्डारकर आदिकी जैसी रिपोर्टें छपी हैं और उनमें जिस ढंगसे प्रत्येक ग्रन्थका मंगलाचरण, प्रशस्ति, ग्रन्थकर्ताका परिचय आदि दिया है वैसा ही सूचीपत्र आप बनायँगे या और किसी तरहका? यह भी बतलाइए कि वह कमसे कम कितने वर्षोंमें बनेगा और अभी उसके बनानेका प्रारंभ भी हुआ है या नहीं? इन बातोंके प्रकट किये बिना समाज आपके इस हौएका स्वरूप न समझ सकेगा। हमने तो इसे खूब समझ लिया है और निश्चय कर लिया है कि यह केवल लोगोंको बातोंमें खुश रखनेके साधनके सिवाय और कुछ नहीं है। वास्तवमें आपके भवनमें कुछ भी नहीं हो रहा है। वहाँ कोई पत्रोंका उत्तर देनेवाला भी नहीं है। अभी यहाँसे पं० उदयलालजी काशलीवालने हरिवंशपुराण-संस्कृतके मँगानेके लिए—जो भवनमें मौजूद है—पत्र लिखा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

था; परन्तु ग्रन्थ आना तो दूर रहा, पत्रका उत्तर भी न मिला! जब आपका बड़ा सूचीपत्र कई वर्षोंमें तैयार होगा, तब यदि एक छोटी सी सूची ही आप छपा देवें जिसमें ग्रन्थोंके नाम, कर्त्ताओंके नाम, ग्रन्थोंकी श्लोकसंख्या, सिर्फ इतनी ही बातें रहें तो क्या भवनका कुछ गौरव कम हो जायगा? क्या यह समाज नहीं सोच सकता कि जब तक सूची ही नहीं है तब तक किसी पुस्तकालयका उपयोग ही क्या हो सकता है? ईडर या नागौरके भण्डारमें और आपके भवनमें हम तो कोई विशेष अन्तर नहीं देखते हैं।

बड़े अफसोसकी बात है कि आप सबके सारे आक्षेपोंको निर्मूल बतलाते हुए भी यह नहीं प्रकट करते हैं कि भवनके हिसाब किताबका क्या हाल है? उसकी रिपोर्ट क्यों प्रकाशित नहीं की जाती है? क्या यह भी सूचीपत्र जैसा कोई महान् कार्य है? यदि आप यही बतला देवें कि भवनमें आजतक कितनी आमदनी हुई और कितना खर्च हुआ तथा अबतक कितने ग्रन्थ लोगोंने नकल कराके मँगवाये और कितने देखनेके लिए, तो समाजको बहुत कुछ संतोष हो जाय। आपका कर्तव्य है कि इस विषयमें गोलमाल उत्तर न देकर समाजको स्वर्गीय बाबू देवकुमारजीकी इस बहुत ही उपकारिणी संस्थाका वास्तविक परिचय दें और उसे सन्तुष्ट करें।

११ बम्बईमें जैन सबसे अधिक मरते हैं।

बम्बई नगरकी मृत्युसंख्याका लेखा देखनेसे मालूम होता है कि यहाँ जैनोंकी मृत्यु सबसे अधिक होती है। विगत वर्ष हज़ार जैनबच्चोंमें ७९२ मरे थे; परन्तु गतवर्ष उनकी संख्या और भी बढ़

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गई और ८२३ पर पहुँच गई! अधिक उम्रवालोंकी मृत्यु भी और जातियोंकी अपेक्षा जैनोंमें अधिक हुई। २०४६० जैनोंमें १२१४ मर गये, अर्थात् फी हज़ार ५९ मरे। यहाँके प्रसिद्ध अँगरेजी पत्र क्रानिकलमें एक लेखकने इसका कारण यह बतलाया है कि यहाँ जैन लोग बहुत ही तंग जगहोंमें अपनी गृहस्थियोंको लेकर रहते हैं। उनकी रायमें जैनधनिकोंको निर्धन जैनोंके लिए पारसियोंके समान खुली हवादार जगहोंमें सस्ते किरायेके मकान बनवा देना चाहिए। हो सकता है कि अधिक मृत्युसंख्याका यह भी एक कारण हो; परन्तु हमारी समझमें इनके सिवाय और भी कई कारण होंगे जिनके विषयमें जैनशिक्षितोंको विचार करना चाहिए।

१२ विजातीय विवाह शुरू हो गये।

जैनसमाजके भीतर जो अनेक छोटी बड़ी जातियाँ हैं उन सबमें परस्पर बेटी व्यवहार होने लगे, इसके लिए जो आन्दोलन शुरू हुआ है उसका फल प्रकट होने लगा। गत वर्ष कोल्हापुरमें प्रो० लट्ठे एम. ए. ने—जो पंचम जातीय हैं—अपनी भतीजीका ब्याह—एक चतुर्थ जातिके युवकके साथ किया था—यह हितैषीके पाठकोंको स्मरण ही होगा। इसके विरुद्ध कुछ नासमझ लोगोंने सिर भी उठाया था, पर उसका फल कुछ न हुआ और अब उनके विरोधकी कुछ भी परवा न करके हालहीमें नागराल (बीजापुर) निवासी पंचम जैन श्रीयुत सिद्धापा कुपानहट्टीने अपने लड़केका विवाह निडोली ग्रामकी एक चतुर्थ जातीय कन्याके साथ कर डाला। पहलेकी अपेक्षा यह दूसरा विवाह इस दृष्टिसे और भी अधिक महत्त्व-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का है कि यह उन पुराने ख़यालके लोगोंके बीचमें हुआ है जिनमें नये विचारोंकी गन्ध भी नहीं है। इससे मालूम होता है कि यदि बराबर आन्दोलन होता रहा तो दश बीस वर्षमें ही जैनसमाजकी बीसों जातियोंमें पारस्परिक विवाह होने लगेंगे।

१३ प्लेग और चूहे।

लगभग अधिकांश प्रभावशाली डाक्टर इस मतको मानते हैं कि चूहे प्लेगके फैलानेवाले हैं, इसी लिए यह देखा जाता है कि लोग चूहोंके पीछे पड़े रहते हैं, उन्हें ज़हर खिलाते और 'एंटी-रेट' का शिकार बनाते रहते हैं, और म्यूनिसिपलटियाँ भी उनके खूनसे हाथ रँगा करती हैं। परन्तु, हालमें, कलकत्ता म्यूनिसिपलटीके हेल्थअफ़सर मि० क्रेकने इस विषयमें अपना जो मत प्रकट किया है, उससे, चूहोंको यदि, उन्हें कुछ भी दीन-दुनियांकी ख़बर होगी तो, कुछ खुशी अवश्य होगी। क्रेक साहबका कहना है कि चूहोंके मारनेसे कोई लाभ नहीं है क्योंकि उनसे और प्लेगसे कोई सम्बन्ध नहीं है। उन्होंने कलकत्ताके म्युनिसिपल बोर्डके सामने अपना यह प्रस्ताव भी पेश कर दिया कि कलकत्ता म्यूनिसिपलटी चूहा-हत्यामें ६०००) रु० की रकम प्रतिवर्ष खर्च करती है अबसे इसके ख़र्च करनेकी आवश्यकता नहीं है। यद्यपि उनका प्रस्ताव माना नहीं गया तो भी उनकी बात एक कानसे सुनकर दूसरे कानसे उड़ाई नहीं जा सकती। वे साधारण योग्यताके मनुष्य नहीं हैं। उनकी यह दलील भी पूरा ज़ोर रखती है कि कलकत्ताके चतुर्थ खण्डमें, जहाँ चूहे नहीं मारे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाते, आज ९ वर्षसे प्लेग आपसे आप कम होता जारहा है; परन्तु द्वितीय खण्डमें, जहाँ चूहे ५० से लेकर ८० फीसदी तक मारे गये, प्लेगका कम होना तो दूर रहा, उलटा वह और बढ़ा। केवल डा० क्रेकहीका यह मत नहीं है, और लोगोंने भी पहले इसी बातको कहा है। १९१२ में मद्रासमें इम्पीरियल सेनेटरी कानफ्रेंस हुई थी, जिसमें बा० मोतीलाल घोष और स्वर्गीय बा० गंगाप्रसाद वर्म्मा भी निमन्त्रित थे। उसमें भी एक डाक्टरने कहा था कि आज तक लाखों चूहे मारे गये, परंतु प्लेगकी गतिमें इस हत्या—लीलाका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। जब कुछ योग्य डाक्टर इस मतको जोरके साथ आगे रख रहे हैं तो कमसे कम देशकी म्यूनिसिपलटियोंका तो यह कर्तव्य है कि वे इस प्रश्नके ऊपर पूरा विचार करें, और यदि देखें कि चूहोंके मरनेसे कुछ नहीं होता, तो उन बेचारोंको त्राण दें, और अपने हजारों रुपये किसी उपयोगी काममें लगावें। हालहीमें पंजाबमें प्लेगके प्रकोपसे ३९ लाख आदमियोंसे अधिकके मरजाने पर, पंजाबके लेफ्टीनेन्टगवर्नरकी धर्म्मपत्नी लेडी ओडायरने उस प्रान्तकी स्त्रियोंके नाम खुली चिट्ठी भेजी है। उसमें भी, आपने इसी बातपर जोर दिया है कि सारी आफतकी जड़ चूहे ही हैं, इन्हें न छोड़ो, घरको इनसे साफ रक्खो। घरोंको साफ रक्खो यह तो एक ऐसी बात है, जो सदा कही जा सकती है, परन्तु क्या चूहोंके पीछे भी हाथ धोकर पड़ जानेकी वैसी ही आवश्यकता है, इसमें सन्देह बढ़ता ही जाता है।

—प्रताप।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ अलमोनियम धातुसे हानि।

देश गरीब है, और अलमोनियमके वर्तन सस्ते आते हैं, और जो अमीर हैं वे अपनी नाजुकमिजाजीके कारण, और कुछ लोग दोनों बातोंसे इन हलके बर्तनोंका व्यवहार करते हैं। जो हो, देशमें इन बर्तनोंका व्यवहार दिन पर दिन बढ़ता जाता है। किन्तु काँसा पीतल, फूलके बर्तनोंकी भाँति लोग इसके गुण और दोषोंसे परिचित नहीं हैं । हालमें डाक्टर हर्बर्टने इस धातुके विषयमें पता लगाया है कि इसके बर्तनोंका व्यवहार स्वास्थ्यके लिए अत्यन्त हानिकर है । क्योंकि भक्ष्य पदार्थोंमें नमकका होना आवश्यक है और नमक-अलमोनियमके संसर्गसे क्लोराइड नामक विष पैदा हो जाता है, जो सब तरहसे हानिकर है।

—प्रताप।

१५ एक दस्सा परवारकी प्रार्थना।

हमारे कई परवार भाई विवेकावारोंसे बड़ी घृणा करते हैं और उनसे किसी भी प्रकारका व्यवहार नहीं रखना चाहते। यदि उनसे इसका कारण पूछा जाता है तो उत्तर मिलता है कि तुम्हारे पूर्वजोंने अन्याय किया था।

बुंदेलखंड प्रान्तमें मैंने बहुधा देखा है कि परवार भाई विनेकावारोंको भगवद्दर्शनोंकी क्या चली जिनालयके दरवाजे तक भी नहीं फटकने देते। दशलाक्षणिक पर्वमें भी यही हाल रहता है; हमारा कुररी-रोदन कोई भी कानों नहीं देता। विमानोत्सव, सभा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व किसी भी प्रकारके जल्सेमें हम लोग पहुँच ही नहीं पाते और न हम लोगोंके हितकी कोई बात ही की जाती है। मानों हमारे परवार भाई हमें बिलकुल ही और सब तरफ़से छोड़ चुके हैं। मेरी इस छोटी बुद्धिसे मुझे जँचता है कि उनका कर्तव्य है कि हम लोगोंकी गलितयाँ हमें सुझावें और यदि उचित समझें तो कोई दंड भी हमें देवें—हम लोग दण्ड भोगनेके लिए तैयार हैं।

कहीं कहीं हमारे श्रीमानों, और विद्वानोंके अटूट परिश्रमसे जैनपाठशालायें, और वाचनालय आदि दिखने लगे हैं जो कि सुशिक्षा देने और कुरीतियोंका काला मुँह करनेमें शक्तिभर परिश्रम कर रहे हैं और उन्हीं सज्जनोंके प्रतापसे हमारा अधिकांश समाज जाग उठा है; पर खेद है कि उसी समाजका एक भाग बहुत बुरी हालतमें है—उसके जगानेका कोई भी प्रयत्न हमारे भाई नहीं करते। जिस स्थानका मैं जिक्र करता हूँ वहाँ एक जैनपाठशाला तथा एक वाचनालय भी है। वहाँके एक सुयोग्य शिक्षक और कार्यकर्त्ताने एक रेलवे बाबूका लड़का (जो कि जातिके विनैकावार हैं) शालामें भरती कर लिया। कुछ दिनों बाद जब दूसरे कार्यकर्त्ताओंकी दृष्टि इस ओर पड़ी तब उस लड़केको पाठशालामें आनेसे साफ़ इंकार कर दिया गया। बेचारे पंडितजीने बहुत कुछ कहा सुना, सभा की, पर उनकी एक भी न चली। ऐसे ही यहाँके वाचनालयकी पुस्तकें भी बहुत कोशिश करने पर पढ़नेको नहीं मिलतीं। यद्यपि हम इस समय धर्मशून्य हैं, तथापि विद्वानोंकी संगतिसे हमारा सुधर जाना असंभव नहीं है। हम लोगोंकी संख्या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बढ़नेके कारण बालविवाह, वृद्धविवाह, कन्याविक्रय और अज्ञान ही मालूम होते हैं। क्योंकि यदि ये कारण न होते और हमारे परवार भाइयोंके ख्यालके मुताबिक मन्दिरोंमें व सभाओंमें न आने देने ही से हम लोगोंकी जाति बढ़ती होती तो आजकल इस खूबीसे विनैकावार जाति न बढ़ती। मैं ऐसे परवारोंको भी जानता हूँ कि जिन्हें गरीबीके कारण परवारोंमें लड़की नहीं मिली और उन्हें विनैकावारोंमें अपनेको ब्याह कर परवश बिनैकाबार बनना पड़ा। जैसा ख्याल आजकल कई परवार भाइयोंका हमारे विषयमें है उससे इस अज्ञको नहीं जान पड़ता कि धर्म और जातिकी तरक्की क्यों कर हो सकेगी? हम लोगोंकी अज्ञानता दूर करने और धर्मकी शिक्षा देनेके प्रयत्नसे भी बहुत कुछ हो सकता है। हमारे कई परवार भाई हमें जातीय दंडके साथ ही साथ धर्मके मर्मसे भी अनभिज्ञ रक्खा चाहते हैं; नहीं जान पड़ता हमारे भाइयोंने इससे क्या फायदा सोच रक्खा है!

प्रार्थी:—

छोटेलाल (बिनैकावार) जैन बिद्यार्थी,

खुरई (सागर)।

सूचना।

सम्पादकके बीचमें बीमार हो जानेसे यह युग्म अंक पूरा न हो सका और कुछ विलम्बसे भी निकला। जितने पृष्ठ कम हैं वे आगामी अंकमें पूरे कर दिये जावेंगे। —**मैनेजर।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

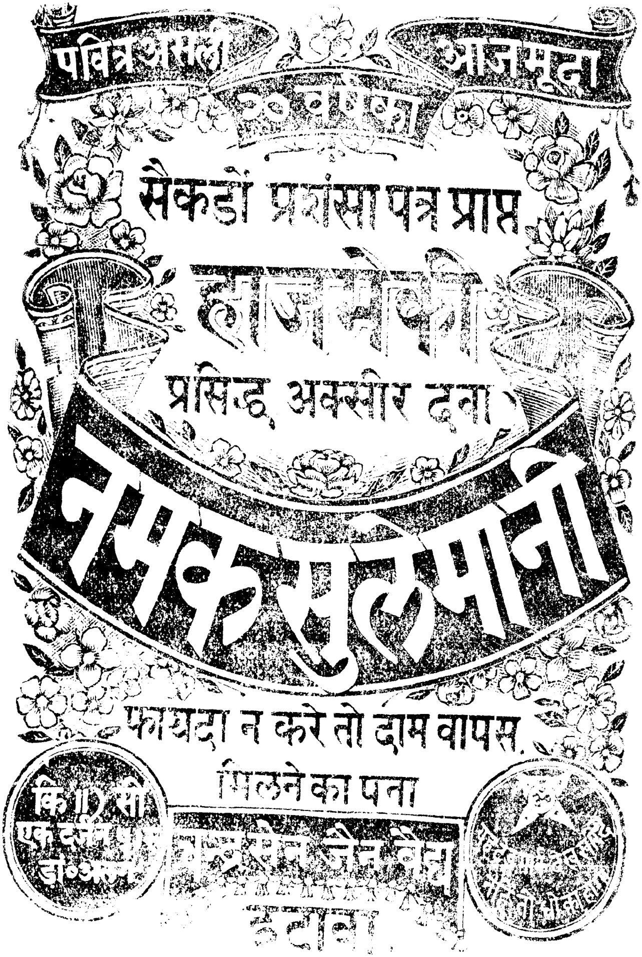

दद्रुदमन—दादकी अकसीर दवा की डब्बी

दन्तकुमार—दांतोंकी रामबाण दवा की डब्बी

नोट—सब रोगोंकी तत्काल गुण दिखानेवाली दवाओंकी बड़ी सूची

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राष्ट्रीय ग्रन्थ ।

१ सरल-गीता । इस पुस्तकको पढ़कर अपना और अपने देशका कल्याण कीजिये । यह श्रीमद्भगवद्गीताका सरल-हिन्दी अनुवाद है । इसमें महाभारतका संक्षिप्त वृत्तान्त, मूल श्लोक, अनुवाद और उपसंहार ये चार मुख्य भाग हैं । सरस्वतीके सुविद्वान् संपादक लिखते हैं कि यह 'पुस्तक दिव्य है ।' मूल्य ।॥)

जयन्त । शेक्सपियरका इंग्लैंडमें इतना सम्मान है कि वहांके साहित्यप्रेमी अपना सर्वस्व उसके ग्रन्थोंपर न्योछावर करनेके लिए तैयार होते हैं । उसी शेक्सपियरके सर्वोत्तम 'हैम्लैट' नाटकका यह बड़ा ही सुन्दर अनुवाद है । मूल्य ॥|=); सादी जिल्द ॥|)

३ धर्मवीर गान्धी । इस पुस्तकको पढ़कर एक बार महात्मा गान्धीके दर्शन कीजिये, उनके जीवनकी दिव्यताका अनुभव कीजिये और द० अफ्रिकाका मानचित्र देखते हुए अपने भाइयोंके पराक्रम जानिये । यह अपूर्व पुस्तक है । मूल्य ।)

४ महाराष्ट्र रहस्य । महाराष्ट्र जातिने कैसे सारे भारतपर हिन्दू साम्राज्य स्थापित कर संसारको कंपा दिया इसका न्याय और वेदान्तसंगत ऐतिहासिक विवेचन इस पुस्तकमें है । परन्तु भाषा कुछ कठिन है । मूल्य –)॥

५ सामान्य-नीतिकाव्य । सामाजिक रीतिनीतिपर यह एक अनूठा काव्य ग्रन्थ है । सब सामयिक पत्रोंने इसकी प्रशंसा की है । मूल्य=)

इन पुस्तकोंके अतिरिक्त हम हिन्दीकी चुनी हुई उत्तम पुस्तकें भी अपने यहाँ विक्रयार्थ रखते हैं ।

नवनीत—मासिक पत्र । राष्ट्रीय विचार । वा० मूल्य २)

यह अपने ढंगका निराला मासिक पत्र है । हिन्दी देश, जाति और धर्म इस पत्रके उपास्य देव हैं । आत्मिक उन्नति इसका ध्येय है । इतना परिचय पर्याप्त न हो तो ।–) के टिकट भेजकर एक नमूनेकी कापी मंगा लीजिये ।

ग्रन्थप्रकाशक समिति, नवनीत पुस्तकालय.

पत्थरगली, काशी.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नई पुस्तकोंका सूचीपत्र ।

कर्नाटक जैन कवि--कनड़ी भाषाके लगभग ७५ प्रसिद्ध जैनकवियोंका इतिहास । मूल्य सिर्फ आधा आना ।

अनित्यभावना--पद्मनन्दि आचार्यकृत संस्कृत अनित्यपंचाशत् और बाबू जुगलकिशोरजी मुख्तार, देवबन्दकी बनाई हुई भाषा कविता । शोकके समय बाँचनेसे बड़ी शान्ति मिलती है । मूल्य -)॥

नेमिचरित या नेमिदूत--विक्रम कविका बनाया हुआ सुन्दर काव्य हिन्दी भाषाटीका सहित । नेमि और राजुलका बहुत सुन्दर सरस वर्णन है । मूल्य ।)॥

न्यायदीपिका--प्रसिद्ध न्यायका ग्रन्थ भाषाटीका सहित । भाषा बहुत सरल सबके समझने योग्य है । प्रारंभमें न्यायका स्वरूप समझनेवालोंके लिए बड़े कामकी है । मू० ॥।)

चरचाशतक--द्यानतरायजीका चरचाशतक सरल हिन्दी भाषाटीका सहित । बहुतही अच्छा छपा है । चार नकशे भी दिये हैं । मूल्य ॥।)

द्यानतविलास या धर्मविलास--कविताका सुन्दर ग्रन्थ शुद्धताके साथ छपा है । द्यानतरायजीका बनाया हुआ प्रसिद्ध ग्रन्थ है । मूल्य १)

पंचमंगल अर्थसहित--अभी हालही यह पुस्तक छपी है । मूलपाठ, कठिन शब्दोंका अर्थ, भावार्थ, प्रश्नावली और प्रत्येक मंगलका सारांश इस क्रमसे इसकी रचना खास विद्यार्थियोंके लिए की गई है । प्रत्येक पाठशालामें इसे जारी कर देना चाहिये । मूल्य तीन आने ।

कल्याणमन्दिर सटीक--भक्तामरके समान पहले मूलश्लोक, फिर अन्वयानुगत अर्थ, फिर नया हिन्दी पद्यानुवाद, और अंतमें बनारसीदासजीका पद्य, इस तरह यह पुस्तक छपी है । पं० बुद्धूलालजीने इसका सम्पादन किया है । मूल्य चार आने ।

सम्यक्त्वकौमुदी--सम्यक्त्वकी सुन्दर सुन्दर कथायें । मूल और हिन्दी अनुवाद सहित हाल ही छपी है । मूल्य १।=)

विद्वद्रत्नमाला--जैनधर्मके प्रसिद्ध २ जिनसेन, गुणभद्र, आशाधर, अमित-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गति, समन्तभद्र, वादिराज, मल्लिषेण, इन सात आचार्योंका ऐतिहासिक चरित्र। बड़ी ही खोजसे यह पुस्तक लिखी गई है। मूल्य ॥≈)

गृहस्थधर्म—ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीने इसकी रचना की है। गृहस्थोंके सभी कर्तव्योंका शास्त्रोक्त वर्णन इस ग्रन्थमें किया गया है। इसे लोगोंने बहुत पसन्द किया है। मूल्य १≈)

ज्ञानार्णव—आचार्य शुभचन्द्रका बनाया हुआ योग और वैराग्यका प्रसिद्ध ग्रन्थ। सरल हिन्दी भाषाटीका सहित। एक बार छपके बिक चुका। अब फिर छपाया गया है। मूल्य चार रुपया।

धर्मप्रश्नोत्तरश्रावकाचार—सकलकीर्ति आचार्यने साधारण बुद्धिवालोंके लिए प्रश्न और उत्तरके रूपमें संस्कृत श्रावकाचारकी रचना की है। यह ग्रन्थ उसीका सरल हिन्दी अर्थ है। मोटे कागजपर सुन्दरतासे छपा है। मूल्य दो रुपया।

कठिनाईमें विद्याभ्यास—यह एक अँगरेजी पुस्तकका अनुवाद है। बड़ीसे बड़ी विपत्तियोंमें रहकर भी–कंगालीकी हालतमें भी जिन जिन लोगोंने विद्या पढ़ी है, उन महापुरुषोंके जीवन चरित इसमें दिये गये हैं। विद्यार्थियोंको अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य सादीका ॥) जिल्दबँधीका ॥=)

गृहिणीभूषण—स्त्रियोंके पढ़ने योग्य इससे अच्छी पुस्तक जैनसमाजके लिए और कोई नहीं छपी। स्त्रीके प्रत्येक कर्तव्यका इसमें विस्तारसे वर्णन किया है। थोड़ीसी प्रतियाँ रह गई हैं। मूल्य ॥)

सागारधर्मामृत-हिन्दी भाषाटीका सहित। श्रावकाचारका बहुत प्रसिद्ध ग्रन्थ है। पण्डित प्रवर आशाधरका बनाया हुआ है। भाषा सरल है। मूल्य १॥)

श्रावकधर्मसंग्रह-पं० दरयावसिंहजी सोधियाने ३०--३२ श्रावकाचारोंके आधारसे इसकी रचना की है। इस विषयकी सभी बातोंपर विचार किया गया है। मूल्य २।)

गोम्मटसार कर्मकाण्ड-यह भाषाटीका सहित छपा है। इस ग्रन्थकी प्रशंसा करनेकी जरूरत नहीं है। मूल्य २) जीवकाण्डका अनुवाद हो रहा है।

आराधनाकथाकोश—मूल और पं० उदयलालजी कृत नई भाषाटीका सहित। भाषा बहुत ही सरल है। पहले भागका १।) दूसरे भागका मूल्य १।≈)

भक्तामरचरित—भक्तामरस्तोत्र, उसके मंत्र और यंत्र, प्रत्येक मंत्रके सिद्ध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होनेकी कथा आदि सब बातें शामिल हैं। कथायें बहुत सरल भाषामें लिखी गई हैं। मूल्य जिल्दबंधीका १।) सादीका १)

नाटकसमयसार—बनारसीदासजीका प्रसिद्ध ग्रन्थ भाषावचनिका सहित खुले पत्रोंपर छपा है। मूल्य २॥)

प्रवचनसार—कुन्दकुन्दका मूल ग्रन्थ, अमृतचन्द्र और जयसेनकी दो संस्कृत टीकायें और हिन्दी भाषा। इस तरह यह ग्रन्थ छपा है। मू० ३)

अष्टसहस्री—न्यायका प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थ विद्यानन्दस्वामी रचित। बहुत ही शुद्धतासे छपा है। मूल्य अढ़ाई रुपया।

प्रमेय-कमल-मार्तण्ड—आचार्य प्रभाचन्द्रका प्रसिद्ध न्यायका ग्रन्थ। यह भी संस्कृत है। मूल्य चार रुपये।

उपमितिभवप्रपंचा कथा (दूसरा भाग)	।≠)
जम्बूस्वामीचरित	।)
हनुमानचरित	।≡)
सीताचरित	≋)
श्रेणिकचरित	१।॥)
यशोधरचरित	।)
प्रद्युम्नचरितसार	।≡)
नागकुमारचरित	।≡)
पवनदूतकाव्य सार्थ	।)
सुशीला उपन्यास (नई आवृत्ति)	१।)
हिन्दी भक्तामर	≠)।
हिन्दी कल्याणमंदिर	≠)
छहढाला सार्थ	≡)॥
सत्यार्थ यज्ञ (चौवीसी पाठ)	॥)
उपदेशी गायन	≡)॥
जैनार्णव कपड़ेकी जिल्दका १।) सादीका	१)
जैनगीतावली—बुंदेलखंडकी स्त्रियोंके लिये	।≠)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीमान् गुणभद्राचार्य रचित

आत्मानुशासन ।

सरल हिन्दी भाषाटीका सहित ।

सुलभ संस्करण ।

इस ग्रन्थका परिचय देनेकी जरूरत नहीं । आत्मापर शासन करनेके लिए उसको वशमें करनेके लिए यह ग्रन्थ अंकुशके तुल्य काम देता है । दश ग्यारह वर्ष पहले यह ग्रन्थ लाहौरमें छपा था तबसे यह दुर्लभ हो रहा था । उस समय इसका मूल्य ४) था; परन्तु अब लगभग दो रुपयामें ही आप इसकी स्वाध्याय कर सकेंगे । भाषा आज कलकी बोल चालकी सबके समझने योग्य कर दी गई है । छपाई सुन्दर है । आश्विनमें तैयार होगा ।

जिनशतक--आचार्य समन्तभद्रका बनाया हुआ यह अद्भुत ग्रन्थ अभीतक लुप्त था । इसमें १०० श्लोक हैं और वे सब चित्र काव्य हैं । अर्थात् इसका प्रत्येक श्लोक चित्रोंके भीतर लिखा जा सकता है । इसमें भगवान्के स्तोत्र हैं । हिन्दी भावार्थसहित छपाया गया है । मूल्य ॥)

धर्मरत्नोद्योत--आरा निवासी बाबू जगमोहनदासका बनाया हुआ हिन्दी कविताका ग्रन्थ । बहुत बढ़िया कागज पर छपा है । मू० १)

परीक्षामुख--न्यायका प्रसिद्ध ग्रन्थ हिन्दी अनुवाद सहित छपा है । यह ग्रन्थ कलकत्ता यूनीवर्सिटीके कोर्समें है और जैनपाठशालाओंमें पढ़ाया जाता है । मूल्य ।=)

आप्तपरीक्षा--आचार्य विद्यानन्दीका प्रसिद्ध न्याय ग्रन्थ हिन्दी अनुवाद सहित अभी हाल ही छपा है । मूल्य ।=)

मिलनेका पता—

जैन-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगांव–बम्बई.

मुंबईवैभव प्रेस, सँडर्स्टरोड गिरगांव–मुंबई.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नई पुस्तकें ।

पिताके उपदेश—एक आदर्श पिताने अपने होनहार विद्यार्थी पुत्रको जो चिट्ठियाँ लिखी थीं उनका इसमें संग्रह है । प्रत्येक चिट्ठी उत्तमसे उत्तम उपदेशोंसे भरी हुई है । जो पिता अपने पुत्रोंको सदाचारी, परिश्रमी, मितव्ययी, विनयवान् और विद्वान् बनाना चाहते हैं उन्हें यह छोटीसी पुस्तक अवश्य मंगाना चाहिए । मूल्य सिर्फ डेढ़ आना ।

अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा—यह भी विद्यार्थियोंके लिए लिखी गई है । बहुत ही अच्छी है । मूल्य =॥)

सिक्खोंका परिवर्तन—पंजाबका सिक्खधर्म एक सीधा साधा पारलौकिक धर्म होकर भी धीरे धीरे राजनीतिक योद्धाओंका धर्म कैसे बन गया इस ग्रन्थमें इसी बातका ऐतिहासिकदृष्टिसे विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है । डाक्टर गोकुलचन्द एम. ए., पी. एच. डी., बैरिस्टर-एट लाके अँगरेजी ग्रन्थ The Transformation of Sikhism का अनुवाद है । मूल्य १॥)

स्वामी रामदासका जीवनचरित—महाराष्ट्र केसरी शिवाजी महाराजके धर्मगुरु रामदासस्वामीका पढ़ने योग्य जीवनचरित । मूल्य ।)

फिजीद्वीपमें मेरे २१ वर्ष—पं० तोतारामजी नामके एक सज्जन कुली बनाकर फिजीद्वीपमें भेज दिये गये थे । वहाँ वे २१ वर्ष तक रहे । उससमय उन्हें और दूसरे भारतवासियोंको जो असह्य दुःख दिये गये थे उनका इस पुस्तकमें रोमांचकारी वर्णन है । मूल्य ।=)

स्वामी रामतीर्थके उपदेश—पहलाभाग । मूल्य ।)

पद्यपुष्पांजलि—हिन्दीके प्रसिद्ध कवि पण्डित लोचनप्रसाद शर्माकी लगभग ४० कविताओंका संग्रह । कवितायें खड़ी बोलीकी हैं । देशभक्ति, जातिप्रेम, आदिके भावोंसे भरीहुई हैं । मूल्य सिर्फ छह आना ।

जर्मनीके विधाता—अर्थात् केसरके साथी—जिन लोगोंके प्रयत्न और उद्योगसे जर्मनीने वर्तमान शक्ति प्राप्त की है उन २४ पुरुषोंका संक्षिप्त चरित इस पुस्तकमें संगृहीत है । वर्तमान युद्धकी गति समझनेके लिए यह पुस्तक अवश्य पढना चाहिए । मूल्य ।)

मैनेजर, हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, पो० गिरगाँव बम्बई

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कलकत्ते के प्रसिद्ध डाक्तर वर्म्मन की

कठिन रोगों की सहज दवाएं।

गत ३० वर्ष से सारे हिन्दुस्थानमें घर घर प्रचलित हैं। विशेष विज्ञापन की कोई आवश्यकता नहीं है, केवल कई एक दवाइयों का नाम नीचे देते हैं।

हैज़ा गर्मी के दस्त में

असल अर्ककपूर

मोल ।) डाःमः ≡) १ से ४ शीशी

पेचिश, मरोड़, ऐठन, शूल, आंव के दस्तमें—

क्लोरोडिन

मोल ।=) दर्जन ४) रुपये।

कलेजे की कमजोरी मिटानेमें और बल बढ़ाने में—

कोला टौनिक

मोल १) डाः ।-) आने।

पेट दर्द, बादीके लक्षण मिटानेमें

अर्कपूदीना [सब्ज]

मोल ||) डाःमः ।-) आने।

अन्दरके अथवा बाहरी दर्दमिटानेमें

पेन हीलर

मोल ||) डाः मः ।-) पांच आने

सहज और हलका जुलाबके लि.

जुलाबकी गोली

२ गोली रातको खाकर सोवे सवेरे खुलासा दस्त होगा। १६गोलियोंकी डिब्बी।-)डाःमः १ से ८ तक ।-) पांच आने.

पूरे हालकी पुस्तक विना मूल्य मिलती है दवा सब जगह हमारे एजेन्ट और दवा फरोशोंके पास मिलेगी अथवा—

डाः एस, के, बर्म्मन ५, ६, ताराचंद दत्त ष्ट्रीट, कलकत्ता।

(इस अंकके प्रकाशित होनेकी तारीख १८-६-१५।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org